शुभोदय

ई-साहित्यिक पत्रिका

तृतीय अंक
(वसंत-2023)
(Volume-2, issue-1)

प्रस्तुति

शुभम्

साहित्य, कला एवं संस्कृति संस्थान (पंजी.)

गलावठी (बलन्दशहर) उ.प्र. भारत

(Volume-2, issue-1)

ई-साहित्यिक पत्रिका (अर्द्धवार्षिक)
ईमेल: shubhodayashubham@gmail.com

वसंत अंक - 2023

संरक्षक
डॉ. कमल किशोर गोयनका
पूर्व उपाध्यक्ष, केन्द्रीय हिन्दी संस्थान,
भारत सरकार

प्रोफेसर महावीर सरन जैन
पूर्व निदेशक, केन्द्रीय हिन्दी संस्थान,
भारत सरकार

प्रधान संपादक
डॉ. देवकीनन्दन शर्मा
मोबाइल - 9837573250

संपादक
डॉ. ईश्वर सिंह
मोबाइल - 9899137354

सह संपादक
मुकेश निर्विकार
डॉ. नीलम गर्ग
डॉ. ब्रजराज यादव

प्रस्तुति
'शुभम्'
साहित्य, कला एवं संस्कृति संस्थान (पंजीकृत)
गुलावठी (बुलन्दशहर), उत्तर प्रदेश, भारत

डिज़ाइन
त्रिगुण कुमार झा
मो. : 9810679648

(Volume-2, issue-1)

'शुभोदय' में प्रकाशित रचनाओं में व्यक्त विचार रचनाकारों के हैं, उनसे 'संपादक मंडल' की सहमति होना अनिवार्य नहीं

‘शुभोदय’ (वसंत 2023) अनुक्रमणिका

सरस्वती वंदना 5

प्रधान संपादक की कलम से 6

संपादक की कलम से 7

साक्षात्कार 8

लेख

रवि दत्त गौड 12

विनय शुक्ला 14

मधु वार्ष्णेय 15

गीता रस्तोगी ‘गीतांजलि’ 17

डॉ. इंद्र कुमार शर्मा ‘आदित्य’ 19

डॉ. देवकीनंदन शर्मा 20

डॉ. ईश्वर सिंह 22

कहानी / लघु कथा

योगेंद्र कुमार सक्सेना 24

विपिन जैन 26

डॉ. टी महादेव राव 28

पूनम सुभाष 30

डॉ. प्रभाकर जोशी 31

संदीप कुमार सिंह 33

हास्य व्यंग्य

अरविंद कुमार ‘विदेह’ 35

रंजीत चौरसिया 37

सुरेश चंद्र शर्मा 39

कविता/गीत/ग़ज़ल

डॉ. सुभाष वसिष्ठ 40

बी के वर्मा शैदी 41

आशा शैली 42

सुरेंद्र दत्त सेमल्टी 43

शिवानंद सिंह ‘सहयोगी’ 44

रमेश कुमार भदौरिया ‘सत्यमन’ 45

डॉ. ज्ञानेश दत्त शर्मा ’हरित’ 46

इंद्रदेव भारती 47

प्रगीत कुँअर 48

डॉ. भावना कुँअर 49

सत्यवती मौर्य 50

मृत्युंजय साधक 51

अंजु सुमन साधक 52

एम एम खान 53

डॉ. स्वप्ना उप्रेती 54

डॉ. बिंदु कर्णवाल 55

ऋषभ शुक्ला 56

अलका मैथिल 57

डॉ. ब्रजराज ’ब्रिजेश’ 58

मुकेश कुमार ‘निर्विकार’ 59

साहित्यिक हलचल / पुस्तक समीक्षा

डॉ. ईश्वर सिंह 60

डॉ. अंजू दुबे 61

डॉ. रमाकांत शर्मा 63

शुभोदय

वर दे...

वर दे, वीणावादिनि वर दे,
प्रिय स्वतंत्र-रव अमृत-मंत्र नव
भारत में भर दे !

काट अंध-उर के बंधन-स्तर,
बहा जननि, ज्योतिर्मय निर्झर,
कलुष-भेद-तम हर प्रकाश भर,
जगमग जग कर दे,
वर दे, वीणावादिनि वर दे,
प्रिय स्वतंत्र-रव अमृत-मंत्र नव
भारत में भर दे !

नव गति, नव लय, ताल-छंद नव
नवल कंठ, नव जलद-मन्द्ररव,
नव नभ के नव विहग-वृंद को,
नव पर, नव स्वर दे,
वर दे, वीणावादिनि वर दे,
वर दे, वीणावादिनि वर दे,
प्रिय स्वतंत्र-रव अमृत-मंत्र नव
भारत में भर दे !

– सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'

प्रधान संपादक की कलम से

.... कल उगूँगा मैं

वर्तमान युग मूल्यों की उथल-पुथल का युग है। उथल-पुथल के इस दौर में हम अपनी सांस्कृतिक विरासत के प्रति उदासीन हो चले हैं। जीवन में नैतिक और मानवीय मूल्यों के प्रति उदासीनता का भाव बढ़ता ही जा रहा है। फलत: असंतोष, घुटन, तनाव और अलगाव जैसी वृत्तियों ने अपना आधिपत्य स्थापित कर लिया है। ऐसी स्थिति में साहित्य और कलाएँ ही ऐसे साधन हैं जो हमें आस्था और विश्वास का सुदृढ़ संबल प्रदान करते हैं। साहित्य और कलाएँ, न केवल हमें यथास्थिति से रूबरू कराती हैं, अपितु हमारी चेतना के नए-नए स्तरों को छूते हुए, सुखद एवं समृद्ध संसार को भी सम्मूर्त करती हैं।

साहित्य के वैशिष्ट्य की इसी पीठिका पर एक वर्ष पूर्व 'शुभम्' साहित्य, कला एवं संस्कृति संस्थान ने 'शुभोदय' साहित्यिक ई-पत्रिका का शुभारंभ किया था। अपने इस सारस्वत अनुष्ठान में देश-विदेश के प्रतिष्ठित साहित्यकारों एवं नवोदित रचनाकारों का विपुल स्नेह और सहकार पाकर हम अभिभूत हैं।

वसंतोत्सव एवं गणतंत्र दिवस (26 जनवरी) को वर्ष 2023 का वसंत अंक आपके हाथों में सौंपते हुए हम प्रफुल्लित एवं गर्वित अनुभव कर रहे हैं। आइए, इसमें अवगाहन कीजिए, रचनाओं की संवेदनाओं को आत्मसात कीजिए और कविवर केदारनाथ सिंह की आकांक्षा बनिए -

"एक नन्हा बीज में अज्ञात नवयुग का
आह कितना कुछ, सभी कुछ, न जाने क्या-क्या
भोर से पहले तुम्हारे द्वार पर
तुम मुझे देखो न देखो, कल उगूँगा मैं।"

श्रीमत्कुंज विहारणे नम:

डॉ. देवकीनंदन शर्मा
प्रधान संपादक

संपादक की कलम से

....सधे कदमों से बढ़ता 'शुभोदय'

'शुभोदय' का वर्ष 2023 का वसंत अंक आपके हाथों में है। यह पत्रिका धीमे-धीमे किंतु सधे कदमों से दूसरे वर्ष में प्रवेश कर गई है। जिस प्रकार देश-विदेश के साहित्यकारों ने इसका स्वागत किया है, उससे हमें बेहद ऊर्जा मिली है। प्रतिष्ठित साहित्यकारों का 'शुभोदय' में अपनी रचनाएँ भेजना इस पत्रिका की गुणवत्ता को रेखांकित करता है। निर्धारित समय सीमा में पर्याप्त रचनाओं का आ जाना भी शुभोदय की स्वीकार्यता का प्रमाण है। मैं उन सभी रचनाकारों, को जिनकी रचनाएं इस अंक में हैं तथा उन रचनाकारों को भी, जिनकी रचनाएं विभिन्न कारणों से इस अंक में शामिल नहीं की जा सकी हैं, उनके स्नेह और सहयोग के लिए विनम्रतापूर्वक नमन करता हूँ।

'शुभोदय' के वसंत अंक का मुख्य आकर्षण प्रेमचंद साहित्य के सुविख्यात विशेषज्ञ और प्रतिष्ठित शोध कर्मी डॉ. कमल किशोर गोयनका का साक्षात्कार है। इस महत्त्वपूर्ण साक्षात्कार के साथ ही इस अंक में आपका लेख, कहानी, लघु कथा, कविता, गीत, ग़ज़ल, दोहे, हास्य-व्यंग्य, साहित्यिक हलचल और पुस्तक समीक्षा जैसी विभिन्न विधाओं से भी साक्षात्कार होगा।

मैं 'शुभोदय' के संरक्षक मंडल, प्रो. महावीर सरन जैन और डॉ. कमल किशोर गोयनका जी को नमन करते हुए सभी रचनाकारों, संपादक मंडल के सदस्यों और पाठको के प्रति उनसे मिले सहयोग और मार्गदर्शन के लिए हृदय-तल से आभारी हूँ ।

'शुभोदय' पर आपका अभिमत, प्रतिपुष्टि और प्रतिक्रिया हमें बेहतर करने का मार्ग सुझाती हैं, इसीलिए हम उसकी अपेक्षा भी करते हैं और प्रतीक्षा भी।

सादर,

डॉ. ईश्वर सिंह

संपादक

'साहित्य समाज का प्रकाश स्तंभ है'

-डॉ. कमल किशोर गोयनका

डॉ. कमल किशोर गोयनका उपन्यास सम्राट मुंशी प्रेमचन्द के साहित्य के विश्व विख्यात विद्वान शोधकर्ता हैं। मुंशी प्रेमचन्द पर उनकी अनेकों पुस्तकें व लेख प्रकाशित हो चुके हैं। प्रवासी हिन्दी साहित्य को एकत्रित करने, अध्ययन एवं विश्लेषण करने में उनकी अहम भूमिका रही है। 'शुभोदय' को प्रेमचंद साहित्य के आलोक में वर्तमान सरोकारों पर उनका साक्षात्कार लेने का सुअवसर प्राप्त हुआ। प्रस्तुत है शुभोदय संपादक, डॉ. ईश्वर सिंह के साथ डॉ. कमल किशोर गोयनका के साक्षात्कार के प्रमुख अंश:

शुभोदय: प्रेमचंद साहित्य में सामाजिक सद्भाव पर विशेष बल दिया गया है। वर्तमान परिवेश में आप साहित्य में सामाजिक सद्भाव की आवश्यकता को किस प्रकार देखते हैं?

डॉ. गोयनका: प्रेमचंद साहित्य में केवल सामाजिक सद्भाव पर ही नहीं, अपितु सामाजिक उन्नयन पर भी बल दिया गया है। प्रेमचंद के साहित्य का उद्देश्य समाज सुधार है। उनकी कल्पना है कि जब तक समाज में व्यक्तिश: चारित्रिक सुधार नहीं होगा, तब तक कोई भी सामाजिक व्यवस्था सफल नहीं होगी। प्रेमचंद ने अपने साहित्य में हिंदू, मुस्लिम और ईसाई तीनों धर्मों के पात्र सृजित किए हैं जिन्होंने मिलकर देश की आजादी के लिए संघर्ष किया है। उन्होंने निर्विवाद रूप से सामाजिक सदभाव को देश की प्रगति के लिए अनिवार्य माना है। सामाजिक उन्नयन के लिए वे समाज का कायाकल्प चाहते थे इसलिए उन्होंने हमारे अंधविश्वास, जड़ता और पाखंड पर चोट की और एक अच्छे मनुष्य के निर्माण का प्रयत्न किया।

शुभोदय: प्रेमचंद ने अपने साहित्य में जातिवाद और छुआछूत पर कड़ा प्रहार किया है। आज छुआछूत कम हुआ है किंतु जातिवाद समाज में सशक्त रूप से मौजूद है। इस स्थिति पर आप प्रेमचंद को कितना प्रासंगिक मानते हैं?

डॉ. गोयनका : यह प्रश्न इसलिए महत्वपूर्ण है कि आपने छुआछूत और जातिवाद को अलग ढंग से देखने की कोशिश की है। यह सही है कि आज समाज में छुआछूत काफी हद तक खत्म हो गया है। जातिवाद के बने रहने का कारण जातिगत आधार पर कुछ सुविधाओं का दिया जाना है जिस पर वे जातियां प्रतिक्रिया करती हैं जिन्हें ये सुविधाएँ प्राप्त नहीं हैं। इसके अलावा जातिगत आधार पर राजनीतिक दलों के उदय ने भी जातिवाद को बल दिया है। जातिवाद को समाप्त करने के लिए अंतरजातीय विवाहों को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। इससे सभी जातियाँ एक दूसरे के निकट आएँगी और जातिवाद समाप्त होगा।

शुभोदय: धार्मिक सद्भाव प्रेमचंद साहित्य की सतत अवधारणा है। आज भारत का आम आदमी धर्म को लेकर अति प्रतिक्रियावादी दिखाई देता है। इस परिपेक्ष में आप प्रेमचंद को कितना प्रासंगिक पाते हैं?

डॉ. गोयनका: प्रेमचंद को भी अपने समय में धार्मिक सद्भाव नहीं मिला और उनके समय में भी धार्मिक संघर्ष समाज में मजबूती के साथ मौजूद था। स्वयं प्रेमचंद को 'कर्बला' लिखने पर विरोध का सामना

करना पड़ा और उन्हें इस विरोध के चलते आगे से इस पर न लिखने की बात करनी पड़ी। प्रेमचंद ने इकबाल द्वारा पाकिस्तान का समर्थन करने के कारण उनका विरोध किया। वे नहीं जानते थे कि उनके बाद इस देश का विभाजन धर्म के आधार पर हो जाएगा। धर्म के आधार पर देश के विभाजन ने जन-मानस में एक विभाजन पैदा किया। हिंदू समाज ने किसी धर्म के प्रति कोई ऐसा कदम नहीं उठाया है जिससे उन्हें प्रतिक्रिया करनी पड़े। धार्मिक सद्भाव के लिए धर्मांतरण अथवा आस्था के प्रतीकों पर असम्मानजनक टिप्पणी करने की प्रवृत्ति से बचना होगा। धार्मिक सद्भाव के लिए यह अनिवार्य शर्त है कि हम एक-दूसरे की धार्मिक भावनाओं का सम्मान करें।

शुभोदय: प्रेमचंद एक सीमा से अधिक राष्ट्रवाद को अच्छा नहीं मानते। आज देश में राष्ट्रवाद या उसकी चर्चा चरम पर है। इस पर आपकी टिप्पणी ?

डॉ. गोयनका : मुंशी प्रेमचंद ने जिस राष्ट्रवाद का विरोध किया है वह साम्राज्यवादी प्रवृत्ति से जुड़ा हुआ है जो प्रथम विश्व युद्ध के बाद पश्चिम में पैदा हुआ था जिसमें कुछ राष्ट्र अपना आधिपत्य जमाने या दूसरे देशों को अपना गुलाम बनाने की सोच रखते थे। प्रेमचंद का राष्ट्रवाद भारतीय राष्ट्रवाद है जिसके केंद्र में संस्कृति और सनातन मूल्य हैं। वे स्वयं अपने साहित्य का उद्देश्य स्वराज्य प्राप्ति और भारतीय आत्मा की रक्षा करना बताते हैं। यह भारतीय आत्मा भी राष्ट्रवाद ही है। भारतीय संस्कृति के वे सबसे बड़े समर्थक हैं।

शुभोदय: प्रेमचंद हिंदी और उर्दू में लिखते थे। वह मिश्रित भाषा का प्रयोग करते थे। आज जब कुछ लोग भाषाई शुद्धता के नाम पर संस्कृतनिष्ठ भाषा या उर्दू के शब्दों से परहेज करने की बात करते हैं तो आप इसे किस रूप में देखते हैं?

डॉ. गोयनका : यह ठीक है कि प्रेमचंद हिंदी और उर्दू दोनों के लेखक हैं और उन्होंने दोनों भाषाओं के मिश्रित रूप को अपनाया जिसे आज हम मानक भाषा मानते हैं। किंतु उन्होंने संस्कृत की शब्दावली का भी भरपूर किया है। उन्होंने बोलचाल की भाषा **को**

साक्षात्कार लेते हुए शुभोदय संपादक डॉ. ईश्वर सिंह

साहित्यिक भाषा के रूप में स्थापित किया, यह उनकी उपलब्धि है। मैं यह मानता हूँ कि उर्दू, फारसी भाषा से जो शब्द हिंदी में आ गए हैं उन्हें अब नहीं निकाला जा सकता वे हमारी भाषा का हिस्सा बन गए हैं किंतु संस्कृत के बिना भी हिंदी का विकास संभव नहीं है। भाषाई विकास के लिए हमें अन्य भारतीय भाषाओं के शब्दों को भी स्वीकार करना चाहिए।

शुभोदय: प्रेमचंद ने अपने साहित्य के माध्यम से नैतिकता और मानव मूल्यों को मजबूत करने का काम किया है। आज अपने परिवेश में इसे आप कितना प्रासंगिक पाते हैं?

डॉ. गोयनका : नैतिकता का प्रश्न पूरी संस्कृति का प्रश्न है। जो संस्कृति नैतिकता को लेकर चलती है वही पूरी मानवता की रक्षा करती है। प्रेमचंद अपने समय के सबसे बडे नैतिकतावादी साहित्यकार थे इसमें कोई संदेह नहीं है। वे स्त्री के सतीत्व के लिए किसी भी स्थिति तक चले जाते हैं। 'कायाकल्प' में वे बलात्कार की पीडित महिला पात्र द्वारा दो अंग्रेजों की हत्या को जायज ठहराते हैं। प्रेमचंद की दृष्टि में नैतिकता के लिए व्यक्ति का चरित्रवान होना बहुत जरूरी है जिसके बिना नैतिकता की रक्षा नहीं हो सकती।

शुभोदय: प्रेमचंद साहित्य की पृष्ठभूमि में, आज युवा पीढ़ी पर पाश्चात्य संस्कृति के बढ़ते प्रभाव पर आपका क्या मत है?

डॉ. गोयनका : युवा पीढ़ी पर पाश्चात्य संस्कृति का प्रभाव तो आजादी से पहले ही प्रारंभ हो गया था।

उस समय पाश्चात्य संस्कृति का प्रभाव शिक्षा, मिशनरियों और प्रशासन के माध्यम से हमारे समाज पर आ रहा था। प्रेमचंद इस पाश्चात्य संस्कृति के विरोध में खड़े हुए थे। उनके अनेक पात्र पश्चिमी सभ्यता से प्रभावित हैं जिनके माध्यम से वह इस दुष्प्रभाव को रेखांकित करते हैं। प्रेमचंद मानते थे कि पश्चिमी सभ्यता का प्रभाव गृहस्थी के लिए कातिल साबित होगा। पाश्चात्य सभ्यता के कारण वे फिल्म उद्योग को छोड़ आए थे। आज तो यह प्रभाव और वीभत्स रूप में दिखाई देता है। हर व्यक्ति अपने बच्चों को विदेश में पढ़ाना चाहता है। इसका समाधान प्रेमचंद साहित्य में निहित संदेश के अनुसरण के अलावा कुछ और दिखाई नहीं देता।

शुभोदय: प्रेमचंद ने समाज में हाशिए पर पड़े आदमी को साहित्य का नायक बनाया। इस प्रयास का आज आम आदमी के जीवन पर क्या प्रभाव देखते हैं?

डॉ. गोयनका : यह सत्य है कि मुंशी प्रेमचंद ने आम आदमी को साहित्य का महानायक बनाया। साहित्य समाज का दर्पण होता है और समाज सामान्य व्यक्तियों से ही बनता है। प्रेमचंद ने रंगभूमि में सूरदास को नायक बनाकर एक भारी क्रांति की। प्रेमचंद ने संस्कृत महाकाव्यों की परंपरा को तोड़कर एक अंधे भिखारी को नायक बना दिया। इसी प्रकार गोदान का होरीराम 4-5 बीघे का किसान है जो उपन्यास का महानायक है। मंत्र का भगत एक धनाढ्य डॉ. के बच्चे को सर्पदंश से बचाता है। प्रेमचंद ने आम आदमी को नायक बनाया है जिससे प्रेरणा लेकर आज समाज में लोग चरित्र निर्माण कर सकते हैं।

शुभोदय: प्रेमचंद साहित्यकार का लक्ष्य महफ़िल सजाना या मनोरंजन करना नहीं मानते, किंतु आज कवि लतीफों के माध्यम से मंच लूटने की होड़ में लगे हुए हैं। इसे आप किस तरह देखते हैं ?

डॉ. गोयनका : मुंशी प्रेमचंद ने प्रगतिशील लेखक संघ के सम्मेलन में कहा था कि साहित्य मन का संस्कार करता है। वे साहित्य को शौर्य, औदात्य, वीरता, बलिदान और संस्कारयुक्त देखना चाहते थे। कवि सम्मेलन में कभी मंच पर बच्चन, दिनकर, महादेवी वर्मा, बाल स्वरूप राही जैसे लोग हुआ करते

थे। धीरे-धीरे कवि सम्मेलनों में लतीफे और जुमलेबाजी ने जगह बना ली है जो कष्टप्रद है। लेकिन मुझे विश्वास है कि आने वाले समय में कवि सम्मेलन पुन: उस प्रतिष्ठा को प्राप्त करेंगे जो उन्हें पहले प्राप्त हुआ करती थी।

शुभोदय: आज बहुतायत में साहित्य सर्जन हो रहा है। क्या आप के मत में यह साहित्य उस कसौटी पर खरा उतरता है जो मुंशी प्रेमचंद ने निर्धारित की थी?

डॉ. गोयनका : मुंशी प्रेमचंद की कसौटी गुलाम भारत की थी, जो आजादी पाने, मानवता को बचाने और भारतीय मूल्यों को संरक्षित करने से प्रेरित थी। प्रेमचंद का साहित्य महात्मा गांधी के दर्शन का साहित्यीकरण है। यदि आप महात्मा गांधी को साहित्य के माध्यम से समझना चाहते हैं तो केवल प्रेमचंद का साहित्य ही आपकी मदद कर सकता है। प्रेमचंद तुलसीदास के 'मंगल भवन अमंगलहारी' के सिद्धांत पर समाज में अमंगल पर मंगल की स्थापना करते हैं। जीवन में जिस किसी भी कारण से अमंगल है, वे उसे समाप्त कर मंगल की स्थापना करना चाहते हैं जो उनका आदर्शोन्मुख यथार्थवाद है। आज इसकी कोई चर्चा नहीं करता। लेकिन पाठक आज भी प्रेमचंद को पढ़ना चाहता है जिससे उसे यह ज्ञान होता है कि उसके समय का लेखन कितना निरर्थक है। मनुष्य मनुष्य में जब तक भेद है, तब तक आप साहित्य का कोई औचित्य नहीं है, क्योंकि साहित्य समाज का पथ आलोकित करने वाला प्रकाश स्तंभ होता है। प्रेमचंद के शब्दों में ही 'साहित्य यदि दर्पण है तो वह दीपक भी है।' आज के साहित्य में इसका अभाव बहुत खटकता है और जब तक यह अभाव दूर नहीं होगा, साहित्य को वह महत्ता प्राप्त नहीं हो सकती जिसका वह हकदार है।

शुभोदय: डॉ. कमल किशोर गोयनका के मत से साहित्य सृजन में भाषा-शैली और विषय वस्तु के पक्ष पर क्या सुधार आवश्यक हैं और क्यों?

डॉ. गोयनका : मैं आलोचक और शोधकर्मी हूँ, मेरे लिए यह बताना उचित नहीं है कि लेखक या साहित्यकार की विषयवस्तु क्या होनी चाहिए। भाषा शैली प्रत्येक व्यक्ति का व्यक्तिक चयन होता है। एक लेखक दूसरे की नकल नहीं कर सकता। लेखक को विषयवस्तु अपने समय से ही लेनी होती है। मुझे लगता है कि आज साहित्यकार तेजी से बदलते विषयों के कदम से कदम मिलाकर नहीं चल रहा है। चीन अंतरिक्ष में बंदरों को भेजकर यह जानने का प्रयास कर रहा है कि अंतरिक्ष में प्रजनन किस प्रकार का होगा, मोबाइल ने आज जीवन को पूरी तरह बदल दिया है, पूरा विश्व परमाणु युद्ध के मुहाने पर खड़ा हुआ है, सृष्टि के विनाश का दृश्य हमें दिखाई दे रहा है किंतु इन विषयों पर रचनाकारों का गंभीर लेखन दिखाई नहीं देता है।

यह विडंबना देखिए कि स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद कोई महान व्यक्ति भारत में पैदा नहीं हुआ है। स्वतंत्रता से पहले यहाँ महात्मा गांधी, स्वामी विवेकानंद, महर्षि अरविंद, मुंशी प्रेमचंद और रविंद्रनाथ टैगौर, नेताजी सुभाष चंद्र बोस, शहीद भगत सिंह, चंद्रशेखर आजाद और अशफाक उल्ला खां पैदा होते हैं किंतु आजादी के बाद कोई ऐसा व्यक्ति नहीं मिलता जिसने बौद्धिक ज्ञान और दर्शन की खोजकर देश को दिशा देने का कार्य किया हो। मुझे यह प्रश्न परेशान करता है कि क्या दमन और शोषण की कोख से ही महानता जन्म लेती है?

शुभोदय: डॉ. साहब, आपने शुभोदय के लिए अपना बहुमूल्य समय दिया और इस साक्षात्कार के माध्यम से हमारे पाठकों का मार्गदर्शन किया, इसके लिए शुभोदय परिवार और संपादक मंडल की ओर से आपका हार्दिक आभार करते हैं। हम दुआ करते हैं कि साहित्य जगत को आपका मार्गदर्शन अनवरत रूप से मिलता रहे।

***

रवि दत्त गौड़
जयपुर, राजस्थान
मो. 9820994672

प्रेम! शांति!! आनंद!!!

आजकल लोगों द्वारा शरीर पर कई तरह के चित्र, घोषवाक्य, नाम (प्रियतम, पति, पत्नी, माता, पिता आदि) गुदवाने का काफ़ी चलन हो गया है। टी-शर्ट वग़ैरह पर भी बहुत से प्रेरणास्पद संदेश लिखे हुए दिख जाते हैं। कुछ समय पूर्व एक युवक की टी-शर्ट पर लिखा हुआ देखा, "प्रेम! शांति!! आनंद!!!"

वैसे तो ये तीन शब्द बहुत सरलन दिखाई देते हैं, पर इनकी श्रृंखला में महत्त्वपूर्ण संदेश है। प्रेम आपसी संबंधों में उच्चतम स्तर की अनुभूति है। प्रेम, वासना और भौतिक आकर्षण से बहुत दूर ऐसा दैविक भाव है जिसे अभिव्यक्ति देने हेतु कई ग्रंथ लिखे जा सकते हैं। प्रेम से उद्वेलित मन को शांति की अत्यंत आवश्यकता होती है, अन्यथा यह व्यक्ति को विक्षिप्तता की ओर धकेल सकता है। प्रेम में किसी भी प्रकार का द्वंद्व, द्वेष विघटनकारी होता है। वहाँ दुविधा, क्षोभ, आक्रोश व क्रोध के लिए कोई स्थान नहीं है। **"सं गच्छध्वम्, सं वदध्वम्, सं वो मनासि जानताम्"** अर्थात मनसा, वाचा, कर्मणा समर्पण के बिना प्रेम में शांति का अभाव रहेगा। वैदिक शांतिपाठ का मंत्र है:

ॐ द्यौः शान्तिरन्तरिक्षं शान्तिः!
पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः !
वनस्पतयः शान्तिर्विश्वेदेवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः!
सर्वं शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधि ॥
ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥

जिसका अर्थ है - द्युलोक में शांति हो, अंतरिक्ष में शांति हो, पृथ्वी पर शांति हों, जल में शांति हो, औषध में शांति हो, वनस्पतियों में शांति हो, विश्व में शांति हो, सभी देवतागणों में शांति हो, ब्रह्म में शांति हो, सब में शांति हो, शांति में भी शांति हो, चारों और शांति हो, शांति हो, शांति हो, शांति हो।

यहां एक बात पर ध्यान आवश्यक है कि "शांतिरेव शांतिः अर्थात शांति में भी शांति की प्रार्थना की गई. है। यह बहुत ही अद्भुत पर सुंदर और गूढ़ विनती है। कई बार देखा गया है कि लोग ऊपर से शांत हैं पर अंदर ही अंदर इतने अशांत होते हैं कि उनमें ज्वालामुखी फटने वाला होता है। इस युक्ति को घर, समाज, देश व विश्व-स्तर पर भी विस्तार दे सकते हैं। भारत-चीन युद्ध इसका सबसे बड़ा उदाहरण है, जहां एक ओर पंचशील समझौते के तहत भारत शांति की बात करते रह गया और चीन ने धोखा दे दिया। कई देशों के कूटनीतिक संबंधों में भी शाँति में अशाँति के दर्शन किए जा सकते हैं।

प्रगाढ़ सम्बंधों में समर्पण और प्रतिबद्धता की आवश्यकता अनिवार्य रूप से होती है। सम्बंध सुदृढ़ तब होते हैं, जब एक दूसरे के संग रहने या मिलने से आनंद की अनुभूति हो। यदि ऐसा नहीं होता और आपसी मुलाकात से एक-दूसरे को तनाव, दुःख, क्रोध या ग्लानि का आभास मात्र भी होता है, जिससे मन व मस्तिष्क विचलित व क्षुब्ध होता हो, तो धीरे-धीरे ऐसे रिश्ते टूटने लगते हैं। ऐसी

परिस्थिति में लोग पुराने रिश्तों से दामन छुडाकर अन्य सम्बल ढूंढने लगते हैं।

सम्बंधों में माधुर्य बना रहे उसके लिए वे सब उत्तरदायी हैं जो एक दूसरे से परोक्ष या अपरोक्ष रूप से जुड़े हुए हैं। रिश्तों में आपसी सौहार्द्र मात्र एक व्यक्ति की पहल से संभव नहीं है। उसके लिए परस्पर विश्वास, सहनशीलता, मधुर, परहितकारी संवाद अपनाने और अपने अहंकार के बलिदान की महती आवश्यकता होती है। जहां श्रद्धा का भाव होता है, वहाँ प्रेम दिव्य शक्ति प्राप्त करता है। जहां संदेह होता है, वहाँ वह प्रस्फुटित होने से पूर्व ही मर जाता है।

घनिष्ठता एक दूसरे में समा जाने की अवस्था है। प्रेम और शांति का संगम आनंद का सृजन करता है। आनंद के अनेक रूप हैं और उत्तरोत्तर उत्तम उनके सोपान हैं। आम आदमी यदि उसकी प्रथम तथा आधारभूत सीढ़ी तक भी पहुंच पाये तो वह भी उसकी बहुत बड़ी उपलब्धि होगी।

प्रेम! शांति!! आनंद!!!

***

'साहित्य का उद्देश्य' - प्रेमचंद

हमें अपनी रूचि और प्रवृत्ति के अनुकूल विषय चुन लेने चाहिए और विषय पर पूर्ण अधिकार प्राप्त करना चाहिए। हम जिस आर्थिक अवस्था में जिन्दगी बिता रहे हैं, उसमें यह काम कठिन अवश्य है, पर हमारा आदर्श ऊँचा रहना चाहिए। हम पहाड़ की चोटी तक न पहुँच सकेंगे, तो कमर तक तो पहुँच ही जाएँगे, जो जमीन पर पड़े रहने से कहीं अच्छा है। अगर हमारा अंतर प्रेम की ज्योति से प्रकाशित हो और सेवा का आदर्श हमारे सामने हो, तो ऐसी कोई कठिनाई नहीं, जिस पर हम विजय न प्राप्त कर सकें।

जिन्हें धन-वैभव प्यारा है, साहित्य-मंदिर में उनके लिए स्थान नहीं है। यहाँ तो उन उपासकों की आवश्यकता है, जिन्होंने सेवा को ही अपने जीवन की सार्थकता मान लिया हो, जिनके दिल में दर्द की तड़प हो और मुहब्बत का जोश हो। अपनी इज्जत तो अपने हाथ है। अगर हम सच्चे दिल से समाज की सेवा करेंगे तो मान, प्रतिष्ठा और प्रसिद्धि सभी हमारे पाँव चूमेगी। फिर मान प्रतिष्ठा की चिंता हमें क्यों सताए? और उसके न मिलने से हम निराश क्यों हों? सेवा में जो आध्यात्मिक आनंद है, वही हमारा पुरस्कार है- हमें समाज पर अपना बड़प्पन जताने, उस पर रोब जमाने की हवस क्यों हो? दूसरों से ज्यादा आराम के साथ रहने की इच्छा भी हमें क्यों सताए? हम अमीरों की श्रेणी में अपनी गिनती क्यों कराएँ? हम तो समाज के झंडा लेकर चलने वाले सिपाही हैं और सादी जिन्दगी के साथ ऊँची निगाह हमारे जीवन का लक्ष्य है। जो आदमी सच्चा कलाकार है, वह स्वार्थमय जीवन का प्रेमी नहीं हो सकता। उसे अपनी मनःतुष्टि के लिए दिखावे की अवाश्यकता नहीं, उससे तो उसे घृणा होती है।

विनय शुक्ला,
वरिष्ठ पत्रकार, मास्को मो. 9873756808

रूसी सिनेमाघरों में फिर से भारतीय फिल्मों का बोलबाला

गत वर्ष फरवरी में रूस-यूक्रेन युद्ध छिड़ने के बाद से अमरीका और यूरोपीय देशों द्वारा रूसी फेडरेशन के विरुद्ध लगाए गए अनेक राजनीतिक और आर्थिक प्रतिबंधों की बदौलत भारत को रियायती दामों पर न केवल कच्चा तेल उपलब्ध हुआ बल्कि हॉलीवुड के पलायन के बाद रूस के सिनेमाघरों में भारतीय फिल्मों का फिर से बोलबाला हो गया है। राजकपूर की "आवारा" और "श्री 420" सहित पूर्व सोवियत संघ के सभी गणराज्यों में हिंदी और अन्य भारतीय भाषाओं की फिल्में लोकप्रिय रही हैं परंतु कम्युनिस्ट शासन के बाद पूंजीवाद के दौर में सिनेमाघरों के निजीकरण के दौरान हॉलीवुड से जुड़े निवेशकों ने मल्टीप्लेक्स बना कर भारतीय फिल्मों को बाहर कर दिया था।

अब तक कई टीवी चैनल अक्सर छुट्टी या त्योहारों के दिन पूर्व सोवियत काल में डब की गई फिल्मों को दोहराते रहते हैं, परंतु अब हॉलीवुड के पलायन के बाद भारतीय फिल्मों को रजत पटल पर फिर से स्थान मिल रहा है। खबरों के अनुसार रूसी भाषा में अनूदित दक्षिण भारतीय फिल्म "पुष्पा" ने दिसंबर के शुरू में रिलीज के बाद तीन हफ्तों में बाक्स-ऑफिस पर लगभग 13 करोड़ रुपए कमाए जबकि वह अभी भी देश के 744 सिनेमा हालों में चल रही है।

पुरानी पीढ़ी के रूसियों में आपको नर्गिस, राज कपूर, सुनील दत्त, शशि और शम्मी कपूर के फैन मिलेंगे तो अधेड़ों के बीच अमिताभ बच्चन, मिथुन चक्रवर्ती, हेमा मालिनी के दीवाने, युवा पीढ़ी के बीच ऋतिक रोशन, शाहरुख खान लोकप्रिय हैं। अब नए नाम जुड़ने वाले हैं।

मिथुन चक्रवर्ती की अदाकारी वाली "डिस्को डांसर" ने सोवियत संघ में 60 करोड़ रूबल (तब की दर से 1200 करोड़ रुपए) की कमाई का रिकॉर्ड बनाया था। अपने ज़माने में भूतपूर्व सोवियत संघ ने 200 से अधिक फिल्में भारत से खरीद कर उनको रूसी भाषा में डब किया था। उस समय के श्रेष्ठ रूसी अभिनेता अपनी आवाज में भारतीय सितारों के संवादों को स्वरबद्ध करते थे। अब तो सबटाइटल्स का ज़माना है।

सवाल उठता है कि रूस में भारतीय फिल्में क्यों इतनी लोकप्रिय हैं। सबसे पहले इसलिए कि वे आशावादी हैं और दोस्ती, प्यार, वफा जैसे पारंपारिक मूल्यों का प्रसार करती हैं। अन्य यूरोपीय देशों की तुलना में रूसी समाज किंचित रूढ़िवादी, पारिवारिक मूल्यों, रिश्तों का सम्मान करने का आदी है। मैं कितनी बार खुद देख चुका हूं कि भावुक होकर किसी सीन पर उनकी आंखे नम हो जाती हैं।

कुछ साल पहले मास्को के पास के एक शहर में राज कपूर की पुरानी फिल्मों का उत्सव हो रहा था। मैंने एक वृद्धा से पूछा कि उन्हें भारतीय फिल्में क्यों पसंद हैं उनका उत्तर था- "मैंने पहली बार राज कपूर की फिल्म 1955 में देखी थी। तब हमारा देश द्वितीय विश्व युद्ध के बाद की तबाही झेल रहा था। हमारे शहर खंडहर थे, खाने-पीने का आभाव था, किसी के चेहरे पर मुस्कान नहीं दिखती थी, पर मैंने देखा भारत में गरीबी के बावजूद लोग मुस्कुराते हैं। इससे मैं बहुत प्रभावित और उत्साहित हुई और मैं अपनी जिंदगी में आशावादी भी हो गई। इसी कारण मैं भारतीय फिल्मों को बड़े चाव से देखती हूं,। भारतीय फिल्मों में हमेशा अंत में बुराई पर अच्छाई की जीत होती है, यही रूसी आत्मा का भी सार है।"

***

मधु वार्ष्णेय
बुलंदशहर – उत्तर प्रदेश मो. 9410615755

कुछ बातें किश्तों में.....

रुकी रुकी और जमी बर्फ सी ठहरी जिंदगी, सर्द हवाओं के पहरे में हरारत लिए अनमना सूरज, और मीठी-मीठी कच्ची सी धूप का दामन थामे एक अलसाई सी गुनगुनी दोपहर,

कुछ मन की बातें,

सुख, तकलीफों की बातें

कुछ शहर गांव की बातें,

इधर उधर की और

एक दिसंबर के आकर जाने की बातें,

विलुप्त होती आंगन की प्रजाति का ही एक रूप है बालकॉनी, सुविधा संपन्न अघोषित पिंजरा। चिर परिचित बेजान कुर्सियां कुछ कीमती सजावटी पौधे और एक टुकड़ा धुंधला आसमान उसमें कलाबाजियां खाते स्लेटी कबूतर और उन सबसे घिरी मैं ..... सामने सड़क के पार खूबसूरत बहु-मंजिला इमारतों की माचिस की डिब्बियों सरीखी बालकॉनियों में कराहता सिसकता शहरी जीवन और जीवन की बेतहाशा दौड़ भाग करते मशीनी मानव और दांई ओर अकेलेपन को तरसती साफ सुथरी लैंप पोस्ट से सजी काली डामर की अंतहीन सड़कें और अपनी हद में रहने को मजबूर तराशे सजावटी पेड़ जिन्हें अपनी बाहें फैलाने की इजाजत नहीं होती, बिलकुल शहरी परिवेश में पले बचपन की तरह अपने जीवन को हम कितने ही रंगो और आयामों के साथ जीते हुए कितने ही स्तरों पर, कितने ही रिश्तों के रूप में सबके साथ बांटने का प्रयास करते रहते हैं लेकिन फिर भी जीवन में में एकरसता या अकेलापन अक्सर महसूस होता है। शहरी जिंदगी और दुनिया कितनी खूबसूरत और चमकीली मगर उतनी ही बनावटी, वीरान और अंधेरी है?

उफ्फ! फिर से एक दिसंबर का आकर जाना... बड़ा कष्टदायी होता है दिसंबर का जाना..। कैलेंडर में आया था और कैलेंडर में ही जा रहा है। जाने क्यों ये दिसंबर अब आने की उम्मीद नहीं जगाता है और न ही कोई खुशी की लहर। जाने कब आया और मुंह उठाए चल दिया.. न आने का उल्लास है और न जाने का गम.. इस संवेदनहीन पत्थर दिल शहर की चमक और आवो हवा में शायद भूल गई हूं, दिसम्बर को महसूसना क्या होता है?

बचपन का दिसंबर याद आ रहा है। परत दर परत.... क्रिसमस की लंबी छुट्टियां और नानी का गांव.... कच्चे भुने चनों की सोंधी सुगंध और गर्म गुड़ की महक से महकता दिसंबर, मटर की मीठी नरम फलियों और गेंहू की दूधिया बालियों से लचकता दिसंबर, सरसों की क्यारियों में पीली चुनरी ओढ़े सजता दिसंबर, सर्द कोहरे की चादर में लिपटे पेड़ों की फुनगियों से ओस के मोती बरसाता दिसंबर, नानी की बरोसी में पके दूध की महक से गमकता दिसंबर, वही नीम की कड़वी हथेलियों से ढंके लिपे जामुनी आंगन में धमा चौकड़ी मचाता दिसंबर, अक्सर दिसंबर ख्वाबों में दस्तक देता है

अब, अपनी बाहें फैलाए पुकार रहा हो मानो, शिकायती लहजे में कह रहा हो एक बार जाकर कभी तो रुख किया होता, ऐसे भी कोई रूठता है भला, कुछ भी तो नहीं भूल पाई हूं, परदेसी लाल काले दोरंगे पहाड़ी कौवे का कांव कांव करना और मेरी नानी का उसको रह रहकर कोसना, मेरी अगवानी में गांव के बाहरी छोर पर बने तालाब में राघव काका की तरह गर्दन उचकाती जल मुर्गी.. बड़ी बड़ी आंखों वाली कस्तूरी चाची का अपने सीने से लिपटाकर ढेरों आशीष देना, सब कुछ तो याद आ रहा है

कई बार आगे निकलने के जुनून में हम अपने रिश्तों से धीरे-धीरे दूर होते जाते हैं । आगे बढ़ने या कुछ अलग करने की चाह में कुछ करीबी रिश्ते पीछे रह जाते हैं। रिश्तो की उधेड़बुन और उलझी जिंदगी को सुलझाना है। यह रिश्ते हमारी मुश्किल घड़ी में हमारी सबसे बड़ी ताकत है। कई बार बीती बातें या घटनायें हमें प्रभावित करती हैं, अपनी गलतियों से सीख लेकर सब भुला कर हम फिर से उन्हें पा सकते हैं।

परिवारों के बिखरते ताने-बाने के बीच यही रिश्ते को बचाने की कवायद मन में एक उम्मीद का संचार करती है और फिर टूटे रिश्तों को जोड़ने की ललक बढ़ती है तो क्यों ना मित्रो आज इस नए साल पर एक ऐसी पहल की जाए, जो रिश्ते वक्त की गर्द में धुंधले हो चले हैं उन्हें फिर से चमकाया जाए, उस छोटे धुंधले आसमां के टुकड़े से बाहर निकल एक बड़े से नीले अबाध आसमान को निहारा जाए, माचिस की डिब्बियों से निकल किसी खुले मैदान में बचपन को स्वछंद उड़ने दिया जाए... खेतों की सर्पीली मेंढों पर बचपन को धूल भरे पांवों से गिरने लुढकने दिया जाए, बंद बचपन को सरसों की महक, गुड़ की मिठास और भुने चनों (होरहों) की सौंधी खुशबू से महकाया जाए। फिर से बचपन को बिछुड़ी कस्तूरी काकी के सीने की गरमाहट दी जाए, शायद कोई राघव काका गर्दन उचका उचका कर अगवानी की बाट जोह रहे हों।

चलो एक बार फिर से वही गुजरा बचपन दोहराया जाए।

***

हिंदी औरे राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी

- **राष्ट्रभाषा के बिना राष्ट्र गूंगा है।**
- **हिन्दी भाषा का प्रश्न स्वराज्य का प्रश्न है।**
- **राष्ट्रीय व्यवहार में हिन्दी को काम में लाना देश की शीघ्र उन्नति के लिए आवश्यक है।**
- **हृदय की कोई भाषा नहीं है, हृदय-हृदय से बातचीत करता है और हिन्दी हृदय की भाषा है।**
- **अखिल भारत के परस्पर व्यवहार के लिए ऐसी भाषा की आवश्यकता है जिसे जनता का अधिकतम भाग पहले से ही जानता-समझता है। और हिन्दी इस दृष्टि से सर्वश्रेष्ठ है।**

गीता रस्तोगी 'गीतांजलि'
गाजियाबाद –उत्तर प्रदेश - मो. 8279798054***

मानव व मानव-यन्त्र

वर्तमान युग विज्ञान एवं तकनीक का युग है। हमने इस कारण से भौतिक संसाधनों की दिशा में अभूतपूर्व उन्नति की है। आज जीवन का कोई क्षेत्र ऐसा नहीं, जहाँ विज्ञान का हस्तक्षेप न हो। घर से लेकर कार्यालयों तक व चिकित्सा जगत में भी इसने ऐसे-ऐसे कमाल किए हैं, जो अविश्वसनीय हैं। जो रोग कभी असाध्य हुआ करते थे, उन में से अधिकांश की चिकित्सा आज सम्भव हो गई है। अभी कुछ दशकों पूर्व जिन घरेलू कार्यों को करने में महिलाओं को काफी परिश्रम करना पड़ता था, उनके लिए सुविधा जनक यंत्र हैं। इन यंत्रों की सहायता से कार्यों में लगने वाला श्रम व समय दोनों ही कम हो गए। जो भोजन चूल्हे व अँगीठी पर पकाया जाता था, वह भोजन कुकिंग गैस स्टोव व प्रैशर कुकर की सहायता से कम समय में तैयार होने लगा ? इसी प्रकार कपड़े धोने के लिए वाशिंग मशीन व बर्तन धोने के लिए डिश वाशर यन्त्र बाजार से घरों तक पहुँच गए। इन सब के बावजूद बहुत से कार्यों के लिए मानव का स्थान यन्त्र कैसे ले सकता है, यही महसूस होता था। मगर विज्ञान ने यहाँ भी हार नहीं मानी। हमारे वैज्ञानिकों को नई-नई चुनौतियों को स्वीकार करना बहुत भाता है और ऐसे कार्य जिनका यन्त्र द्वारा संचालन किया जाना नितांत असम्भव प्रतीत होता था, उनके क्रियान्वयन के लिए भी यंत्रों का निर्माण कर दिखाया। आज हम उन यंत्रों का जिक्र कर रहे हैं, जो हूबहू मनुष्य की भाँति एक या एक से अधिक कार्यों को अति कुशलतापूर्वक कर पाते हैं। इन यंत्रों को हम रोबोट अथवा मानव-यन्त्र कहते हैं।

वर्तमान युग व्यस्तता एवं भाग-दौड़ का युग है। अतः मानव सामाजिक प्राणी होते हुए भी अपने करीबी लोगों के साथ बहुत वक्त नहीं गुजार पाता। ऐसी स्थिति में किसी अकेले जरूरतमंद व्यक्ति को यदि कुछ कार्यों में कोई सहायता कर सकता है तो वह है रोबोट या मानव निर्मित मानव-यन्त्र। आजकल लगभग एक नए कम्प्यूटर की कीमत में या इससे कुछ अधिक में, ये रोबोट बाजार में उपलब्ध हैं। हम लोग फिल्मों या टी वी धारावाहिकों में ऐसे रोबोट्स को देखते हैं। मगर वास्तविक जीवन में भी आज रोबोट की उपलब्धता सामान्य जीवन में असम्भव से सम्भव बनता जा रहा है। ये रोबोट कृत्रिम बुद्धिमत्ता का उपयोग करते हैं व अपने मानव मालिकों के जीवन को अपनी योग्यतानुसार आसान बनाने का हर सम्भव प्रयास करते हैं।

आज मैं यहाँ रोबोट के कुछ प्रकारों का जिक्र कर रही हूँ।

1.एसस ज़ेनबो (Asus Zenbo)

यह स्मार्ट मोबाइल साथी रोबोट आपको सहायता व मनोरंजन प्रदान करता है। ज़ेनबो के साथ आप अपनी भावनाएँ भी साझा कर सकते हैं। यह आपकी बातों को ध्यान से सुन कर न केवल समझता है बल्कि सीखता भी है। यह घरेलू यंत्रों का

उपयोग करने में भी सक्षम है साथ ही आपके घर की सुरक्षा भी कर सकता है। ज़ेनबो आपकी अनुपस्थिति में आपके बच्चों को पढ़ा सकता है, उनका मनोरंजन कर सकता है, उनका दोस्त बन सकता है और छोटे बच्चों को गोद में भी उठा सकता है।

2.अल्फावाइस मैग्नेटिक (Alfawise Magnetic)

अल्फावाइस मैग्नेटिक आपके घर को एक वैक्यूम क्लीनर की तरह साफ करता है। यह ठीक ऐसे ही कार्य करने में सक्षम है जैसे आपकी घरेलू सहायिका करती है।

3.वर्क्स लैन्ड्रॉयड (Worx Landroid)

यह रोबोट आपके बगीचे की बखूबी देखभाल कर सकता है एवं नियमित रूप से लॉन में घास की कटाई कर सकता है।

इसकी एक विशेषता यह भी है कि यदि इसकी बैटरी कम हो तो स्वतः चार्जिंग पॉइंट तक पहुँच जाता है। इसी प्रकार यदि अचानक बारिश आ जाए तब भी यह काम बंद करके अपने चार्जिंग पॉइन्ट पर पहुँच जाता है।

4.बज्जी (Budgee)

कभी-कभी आपको एक ऐसे व्यक्ति की आवश्यकता महसूस होती है जो उस समय आपके साथ रहे जब आप खरीदारी करने बाजार जा रहे हों और आपको सामान उठाते समय अपनी अष्टभुजा दुर्गा माँ या चतुर्भुज भगवान विष्णु के स्वरूप का स्मरण हो रहा है। क्या आपको कभी ऐसा नहीं महसूस हुआ कि हमें चार या आठ भुजाएं देकर ही भगवान ने क्यों नहीं भेजा। यह विचार आता ही है जब आपके सामने ढेर सारा सामान हो और उठाने के लिए केवल दो हाथ। ऐसी स्थिति में यह **बज़्ज़ी** नामक रोबोट आपका पूरा साथ देगा, आपका सामान भी उठाएगा और आपको अतिरिक्त थकान से बचा कर आपका सहारा बनेगा।

रोबोट भी अन्य अनेकानेक यंत्रों की भाँति ही एक मानवनिर्मित यन्त्र है जो मानव जीवन को सरल करने के लिए ही निर्मित किया गया है। यद्यपि मानव स्वयं भी एक भगवान द्वारा निर्मित यन्त्र ही है तब भी किसी न किसी प्रकार से मानव निर्मित यंत्रों से न केवल भिन्न है बल्कि बेहतर भी है। मानवों में भगवान द्वारा प्रदान किए गए सद्गुण भी हैं और भावनाएँ भी , जिनमें करुणा, दया, ममता व सहयोग की भावना भी है। हम आज यंत्रों की दुनिया में जी रहे हैं जो एक दृष्टि से अच्छा ही है कि हमारा जीवन आसान होता जा रहा है मगर दूसरी दृष्टि से देखा जाए तो हम स्वयं ही यंत्रवत होते चले जाते हैं। अति सुविधाभोगी जीवन जीते-जीते कभी-कभी मानव अपने कर्तव्यों को भी भूल जाता है और उन मानवीय गुणों को खोता चला जाता है जो दैवीय हैं। जैसे आज प्रत्येक बालक, युवा, वृद्ध के हाथ में मोबाइल रहता है तब अनावश्यक रूप से व्यक्ति इसका उपयोग करता है। दुरुपयोग होने से एक उपयोगी यन्त्र मात्र एक लत बन कर रह जाता है। इससे हमारे पास जो एक बहुतायत में उपलब्ध मानव संसाधन है, इसकी अथाह शक्ति का अपव्यय हो रहा है।

अतः यह विचारणीय है कि हम अति आवश्यकता के समय ही रोबोट्स या अन्य यंत्रों का उपयोग करें मगर यह ध्यान रखें कि इन पर हमारी निर्भरता इतनी अधिक न बढ़ जाए कि हम स्वयं अस्वस्थ हो जाएं या यंत्रवत ही हो जाएं। हम सब इंसान हैं अतः आवश्यक है कि इंसानियत के जज्बे को खुद में जिंदा रखें व इस परंपरा को भावी पीढ़ियों को सौंपने का माध्यम बनें।

***

डा. इंद्र कुमार शर्मा 'आदित्य'
साहिबाबाद, गाजियाबाद-उ.प्र. मो. 8376909647

विश्व भाषा हिन्दी

प्रत्येक देश यह चाहता है कि उसकी राजभाषा विश्व भाषा बने। विश्व में सर्वाधिक बोली जाने वाली 3 भाषाएँ हिन्दी, मंदारिन व अँग्रेजी हैं। हिन्दी विश्व में सबसे अधिक बोली और समझे जाने वाली भाषा है। डा. जयंती प्रसाद नौटियाल ने अपने भाषा शोध अध्ययन में यह सिद्ध कर दिया है।

हिन्दी एक प्राचीन एवं मानकीकृत भाषा है। भारत के अतिरिक्त जावा, सुमात्रा, बाली, इन्डोनेशिया, कंबोडिया, मिश्र आदि देशो में आज से सदियों पूर्व भी हिन्दी भाषा के शब्द प्रयोग किए जाते थे। हिन्दी भाषा के माध्यम से अभियंत्रण, प्रबंधन और वैज्ञानिक विषयों पर अध्ययन और अध्यापन की सुविधा उपलब्ध है। संस्कृत की पुत्री होने के कारण इसका व्याकरण बहुत ही समृद्ध है।

हिन्दी देवनागरी लिपि में लिखी जाती है जो विश्व की सबसे वैज्ञानिक एवं सक्षम लिपि है। सभी ध्वनियों को लिपिबद्ध करने की क्षमता हिन्दी भाषा में है। हिन्दी को बड़ी आसानी से सीखा जा सकता है क्योंकि इसमें जैसा बोला जाता है, वैसा ही लिखा जाता है। हिन्दी में उपसर्ग और प्रत्यय लगाकर अनेक शब्द बनाए जा सकते हैं।

हिन्दी विश्व के सैकड़ों देशो में समझी और बोली जाती है। हिन्दी का जो उर्दू मिश्रित स्वरूप है वह स्वीकार्य है। लखनऊ, बिजनौर और अमरोहा के आस पास बोले जाने वाली भाषा हिंदुस्तानी है। हैदराबाद में बोली जाने वाली भाषा का स्वरूप दक्खनी हिन्दी है। मुंबई में बोले जाने वाली भाषा मुम्बइया हिन्दी है। हिंदी में अरबी, फारसी और अंग्रेजी के शब्दों के प्रयोग ने इसे लोकप्रिय और विकासोन्मुख बना दिया है।

भारत के लिए यह गौरव की बात है कि पूरे विश्व में भारत का सम्मान है। माननीय प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी की विदेश यात्राओं से हिन्दी के प्रचार प्रसार को बहुत बल मिला है। भारतीय योग को अपनाने वाले लोग विश्व के हर देश में मौजूद हैं। भारतीय योग गुरूओं और प्रशिक्षकों के विदेशों में योग शिविर के आयोजनो से भी हिन्दी की लोकप्रियता बढ़ी है। भारत एक आर्थिक महाशक्ति के रूप में भी उभरा है इस कारण से भी भारत की राजभाषा हिन्दी विश्व पटल पर अपना वर्चस्व बना रही है।

अब तक विश्व में 11 विश्व हिन्दी सम्मेलन आयोजित किए जा चुके हैं। हिंदी की स्वीकार्यता को बढ़ाने में इन सम्मेलनों का बहुत सकारात्मक प्रभाव हुआ है। 10 जनवरी 1975 को नागपुर में पहला विश्व हिन्दी सम्मेलन आयोजित किया गया था जिसका उदघाटन तत्कालीन प्रधान मंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी ने किया था । इस समारोह के मुख्य अतिथि मरीशस के प्रधान मंत्री श्री शिव सागर गुलाम थे। इसमें 30 देशों के 122 प्रतिनिधि शामिल हुए थे। इस समारोह का उद्देश्य हिन्दी को विश्व भाषा बनाना था। तभी से विश्व हिन्दी दिवस मनाया जाता है।

हिन्दी का प्रोद्यौगिकी और कम्प्यूटर में व्यापक रूप से प्रयोग हो रहा है। आज विश्व बाजार में हिन्दी ने अपनी जगह बना ली है। हिन्दी के बिना मार्केटिंग संभव ही नही है। अतः हिन्दी को विश्व पटल पर प्रस्थापित किए जाने में कोई समस्या नही होनी चाहिए।

***

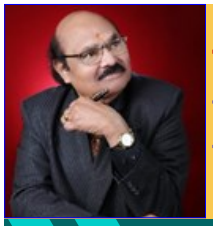

डॉ. देवकीनंदन शर्मा
गुलावठी, बुलंदशहर
मोबाइल 98375 73250

भोजपुरी लोकगीतों पर एक दृष्टि

सत छांडि कइसे पत रहि हें

लोकगीत हमारी संस्कृति का प्राण हैं। हम चाहे कितने भी मॉडर्न बन जाएं, हमारा विचार और रहन-सहन कितना भी परिवर्तित हो जाए, पॉप और वाद्य यंत्रों के झंझा के बीच कितना भी खो जाएं, पर मिट्टी की सोंधी महक से लबालब भरे लोकगीतों का कोई मुकाबला नहीं है। इसीलिए आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने लोकगीतों को हमारी विभूति माना है - 'उसकी एक-एक बहू के चित्रण में सौ-सौ मुग्धाएँ खंडिताएँ और निछावर की जा सकती हैं क्योंकि यह निर्गत होने पर भी प्राणमयी हैं और वे अलंकारों से लदी हुई होकर भी निष्प्राण हैं।' यूं तो लोकगीत जीवन के सभी अवसरों के मनोरम लम्हों को नैसर्गिक उत्साह से भर देते हैं, पर नारी जीवन की कोमलकांत संवेदना, उसका मुक्तहास, प्राकृतिक सिंगार, स्वभाविक चांचल्य, समर्पण और अभिरमण को लोकगीतों में बड़ी शिद्दत के साथ पिरोया गया है।

कितनी बड़ी विडंबना है कि परिवार में कन्या के जन्म लेते ही परिवार के सदस्यों का उत्साह उड़न-छू हो जाता है। बेटी को जन्म देने वाली मां कहती है-

जाहि दिन बेटी हो तोहरो जन्म भइले
पेंडुरी मोरा दहराई ए .....

मां को शारीरिक और मानसिक यातना झेलनी पड़ती है। घर में सोहर के सुर मंद पड़ जाते हैं। बधाइयां धीमी पड़ जाती हैं। फिर ईश्वर की देन समझकर उसे लक्ष्मी का स्वरूप मानकर संतोष कर लिया जाता है। कन्या तेजी से बढ़ने लगती है। फूल की तरह उसका सौंदर्य लगता है। सखी सहेलियों के साथ निर्द्वंद्वभाव से कुलांचे भरने लगती है। मां-बाप की भूख प्यास मिटना शुरू हो जाती है। वे किसी प्रकार कन्या को पार लगा देना चाहते हैं। पिता का उत्तरदायित्व और मां का मातृत्व द्वंद में हिचकोले खाता है। यक्ष प्रश्न खड़ा हो जाता है कि वे कैसे अयोग्य के हाथों अपनी बेटी को सौंप दें। आखिर बेटी की शादी की घड़ी आ जाती है। विदाई के समय मां उसे आखिरी बार अपने हाथ से खिलाती है:

खाई लेहु, खाई रे देहु, दहिया रे भात
तोहरि विदइया बेटी बड़ी से भिनुसार

विदा करते हुए मां-बाप उन्मादी हो जाते हैं :

दूअरा भूलिए बाबा जो रोवले
कतहीं ना सुनीला बेटी नूपुरवा तोहार
अंगना भूलिये भूलि आमा जो रोवेली
कतहीं ना देखो बेटी रसोइया झाझाकल

ससुराल पहुंचकर उसकी चंचलता लुप्त हो जाती है। बहू बन जाने पर उसे गंभीरता का आवरण ओढ़ना पड़ता है। परिवार के सदस्यों से कटु अनुभव मिलते हैं। ईर्ष्यालु ननद, कठोर जेठानी, कर्कश सास के साथ उसे विषाक्त वातावरण में रहना पड़ता है। पति, जोउसे प्रेम कर सकता है, कमाने के लिए परदेस चला जाता है। शादी के बाद मर्द को कमाना ही पड़ेगा। विवश वह रेल और जहाज को कोसत है:

रेलिया ना बेरी जहजिया ना बेरी
ऊहे पइसवे बेरी हो
रेलिया होगा मोर सवालिया
पिया के लादि लई गई हो

पति के जाते ही सास उसे दासी बना डालती है। मूक गाय की तरह यातना स्वीकारी जाती हैं। कभी सर नहीं उठाती। कूटते-पीसते और दिन-रात खटते-खटते, समय का पंछी उड़ता चला जाता है किंतु उसका पति नहीं लौटता। उसे महसूस होता है कि यदि उसका पति उसे छोड़कर परदेस न गया होता तो उसकी गोद सूनी नहीं रहती:

डांड मोरा बयेला गहागहि
कपार मोरा बथेला हो, ए परभू
पिरिथिवी मोरा सूझेलि अलोपित
अंगुरी में दम बसे हो....

उसे उसे अकारण आशंका भी हो जाती है की सास ननद उसे कहीं बांझ न समझ लें। एक दिन जेठानी से उसे अचानक पता चलता है कि उसका भाई सावन में उसे लेने आ रहा है। उसका रोम-रोम पुलक उठता है। काठ की बनी सास बहू को मायके नहीं भेजने की अपनी मंशा प्रकट करती है। अरसे से रुका बहू का बाँध भाई के सामने टूट पड़ता है:

सबके खिआई, भइया सबके पियाई रे ना
ना भइया बांची जाला पछिली टिकरिया रे ना
सबके ओटाई सबके पहिराई रे ना
भइया, बांचि जाला फट ही लुगरिया रे ना
भइया, ओहू में से ननदी ओढनियाँ रे ना
भइया, ओहू में से देवरा कहहिया रे ना ...।

आखिर भाई को बैरंग लौटना पड़ता है। संतोष की मूर्ति गांव की बहू का कष्ट यहीं समाप्त नहीं होता। एक दिन परदेस से तार आता है, पति का निधन हो जाता है। वज्रपात की इस घड़ी में उसकी सारी आशाएं धूल में मिल जाती हैं। प्रलाप के सिवा कोई सहारा नहीं रहता:

हम नहीं जननी विदेसवा में मरिहें
जाए ना दोहनीं ए रामा
हमार दिनवा के पार लगइहें
कवन घटवा लागबी ए रामा
अरे निरमोहिया, कोंखवो ना भरलस
बंझीनियाँ बनाई पराईल ए रामा

मर्यादा में बंधी वह अपने संस्कारों के प्रभाव से पतिव्रत धर्म का निर्वाह करती है। उसे पग-पग पर झंझावतों का सामना करना पड़ता है। उसके रूप और लावण्य पर मनचला पड़ोसी देवर मोहित हो उठता है:

डाली भर सोना लेहुं, मोतियन से मांग भरूँ
जत छाडि मोरा संग लागहु नु रे की....।

इस नारी का आत्म नियंत्रण तो देखिए, अपने पड़ोसी देवर को दो टूक उत्तर देती है:

आग लागे सोनवाँ, बजर पड़े मोतियारे
सत छाडि कइसे पत रहि हें नु रे की ....।

लौकिक आसक्ति पर लोकोत्तर प्रेम की यह विजय अद्भुत है, उदात्त है। सत (सतीत्व) छोड़ देने से पत (प्रतिष्ठा) नहीं रहती। यह महती संदेश हमें भोजपुरी लोकगीतों की यह नारी देती है । संभवतः इसी वैशिष्टय के कारण लोकगीत हमारी अमूल्य धरोहर है। हमें अपनी इस इस धरोहर पर नाज है।

***

डॉ. ईश्वर सिंह
राजेंद्र नगर, गाजियाबाद–उत्तर प्रदेश
मो. 9899137354 ईमेल : istotia1162@gmail.com

भाषाई उदारता के दुष्प्रभाव

भाषाई उदारता, यानी दूसरी भाषाओं के प्रचलित शब्दों को अपनाना, भाषा का ऐसा गुण है जो उसकी अपनी समृद्धि के लिए जरूरी है। शब्दों की उत्पत्ति परिवेश सापेक्ष होती है। एक परिवेश में जन्मे शब्द, दूसरे परिवेश के लिए अंजान होते हैं। जब अलग-अलग परिवेश के लोग परस्पर संपर्क में आते हैं, तो एक भाषा के शब्द दूसरी भाषा में भी चले जाते हैं और उनका उपयोग दूसरे भाषाभाषी भी करने लगते हैं। किसी भाषा से प्राप्त ऐसे शब्दों का स्वागत किया जाना चाहिए। इससे एक नए परिवेश को समझने में मदद मिलती है। इस संदर्भ में हिंदी अत्यंत उदार है।

भारतवर्ष एक बहुभाषी देश है। इन भाषाओं की शब्दावली अलग-अलग है। प्रांतीय भाषाओं के शब्दों को हिंदी में स्थान देकर हम हिंदी को देश की सभी प्रांतीय भाषाओं के निकट ले जा सकेंगे। इन भाषाओं के प्रचलित शब्दों को हिंदी में स्वीकार करके और उन्हें हिंदी का पर्याय मानकर हिंदीतर राज्यों में हिंदी की स्वीकार्यता को बढ़ाया जा सकता है। इसलिए भी हिंदी में भाषाई उदारता स्वागतयोग्य है।

तथापि इस भाषाई उदारता के दुष्प्रभावस्वरूप अंग्रेजी के बहुत से शब्द हिंदी में आते जा रहे हैं। जो शब्द यूरोपीय उत्पादों के साथ आए हैं, जैसे मोबाइल, कंप्यूटर, टाई, कोट, टीवी, टेलीफोन आदि वे स्वीकार्य हैं। भारत में लोग इन्हें अंग्रेजी नामों से ही जानते हैं। यह अनावश्यक होगा कि हम उनके हिंदी नाम गढ़ें। अंग्रेजी या अरबी भाषा के शब्दों की शब्दश: हिंदी तभी जरूरी है, जब उनके प्रयोग से कोई भ्रम उत्पन्न होता हो।

चिंता का विषय यह है कि आज बोल-चाल, मीडिया और अखबारों की भाषा में अनावश्यक रूप से अंग्रेजी के शब्द ठूंसे जा रहे हैं। हम 'सर्वोच्च न्यायालय' को 'सुप्रीम कोर्ट' और 'उच्च न्यायालय' को 'हाईकोर्ट' लिखने/पढ़ने के आदी हो रहे हैं। हम 'समस्या' को 'प्रॉब्लम' और 'बाजार' को 'मार्केट' मानने लगे हैं। अब 'भाई बहन', 'ब्रदर एंड सिस्टर' और 'माता-पिता' 'पेरेंट्स' बन गए हैं। अब 'पिताजी' 'फादर' बन गए और 'माँ', 'मदर' या 'मॉम'। 'धर्मपत्नी' को हमने 'वाइफ' बना दिया है, 'पति' को 'हस्बैंड'। 'कमीज' 'शर्ट' में बदल गई है और 'नाश्ता' 'ब्रेकफास्ट' में। अब 'चेहरे' की जगह 'फेस' ने ले ली और 'शरीर' की 'बॉडी' ने, जिसमें 'दर्द' से ज्यादा 'पेन' होता है। अब लोगों का 'देहांत' या 'स्वर्गवास' नहीं होता, 'डैथ' होती है या 'एक्सपायर' होते हैं। वे 'बीमार' नहीं, 'सिक' होते हैं। 'कुर्सी' 'मेज' की जगह अब 'चेयर' 'टेबल' ने ले ली है। क्रिकेट में 'गेंद', 'बॉल' और 'बल्ला' 'बैट' बनता जा रहा है। यही नहीं, 'वापिसी' की जगह अब खिलाड़ी 'कमबैक' करने लगे हैं। अब लोग 'सुबह की सैर' पर नहीं, 'मॉर्निंग वॉक' पर जाते हैं। 'शिक्षक', और 'विद्यालय' तो कब के 'टीचर', और 'स्कूल' बन चुके हैं। 'धन्यवाद' स्थायी रूप से 'थैंक यू' बन गया है। 'श्री' और 'श्रीमती' की जगह 'मिस्टर' और 'मिसेज' ने ले ली है। 'परिवार' खत्म होने पर 'फैमिली' ने जन्म लिया है। 'सहायता' की जगह हम 'हैल्प' मांगते हैं। 'इतवार', 'सोमवार' का स्थान 'संडे', 'मंडे' ले चुके

हैं, रंगों के नाम, अंगों के नाम अंग्रेजी वाले ही बचे हैं। हम 'नियम व शर्तें लागू' जैसे सरल वाक्यांश के स्थान पर 'टीएंडसी एप्लाई' जैसा जटिल वाक्यांश लिखने लगे हैं। इन सारे अंग्रेजी शब्दों के हमारे पास सरल, सुग्राह्य, सुबोध एवं प्रचलित हिन्दी पर्याय हैं, लेकिन हम अंग्रेजी को वरीयता देते हैं? क्या इससे हमारी भाषा से हिन्दी के शब्द गायब नहीं हो जाएंगे? क्या यह हमारी अपने भाषाई गौरव के प्रति उदासीनता नहीं हैं?

हिंदी को समृद्ध करने के नाम पर अंग्रेजी के अंधाधुंध प्रयोग से पहले हमें यह समझना जरूरी है कि ऐसा करके हम अपनी परंपरा और संस्कृति को कमजोर कर रहे हैं। स्वयं अंग्रेजी भाषा ने दुनिया की अनेक भाषाओं की शब्द संपदा को स्वीकार किया है किंतु अपनी संस्कृति और परंपरा की कीमत पर नहीं, न ही उन्होंने अपने प्रचलित शब्दों का त्याग किया है। हम चाचा को अंकल कहने लगे किंतु उन्होंने ताऊ, फूफा, मामा, मामी जैसे संबोधनों को स्वीकार नहीं किया। हिंदी बोलते समय 'बट', 'एंड', 'यू नो', 'ऑलरेडी' का इस्तेमाल करने वाले अंग्रेजी बोलते हुए हिंदी के शब्दों का इस्तेमाल नहीं करते, क्यों? हमें अंग्रेजी की शुद्धता की चिंता हैं और अपनी भाषा की नहीं?

अंग्रेजी का एक दुष्प्रभाव हम पौराणिक पात्रों के नामों के उच्चारण में देखते हैं। 'कृष्ण' को 'कृष्णा', 'अर्जुन' को 'अर्जुना', 'भीम' को 'भीमा', 'लक्ष्मण' को 'लक्ष्मणा', 'रावण' को 'रावणा', 'कुंभकर्ण' को 'कुंभकर्णा' 'रामायण' को 'रामायणा' और 'महाभारत' को 'महाभारता' बोलते हुए हम उस घातक प्रभाव को नहीं देख पाते जो धीरे धीरे हमारी संस्कृति और भावी पीढ़ियों के ज्ञान पर पड़ रहा है। बचपन से अपने आराध्य पौराणिक नामों को गलत सुनने वाले बच्चे उनका सही नाम कैसे जानेंगे?

कुछ विद्वान तर्क देते हैं कि जब अंग्रेजी शब्दों को सब समझ लेते हैं तो उनके प्रयोग में क्या हानि है? भाषा की अतिशुद्धता के साथ-साथ मैं इस बात का भी पक्षधर नहीं हूँ कि हम अपनी भाषा के प्रति आत्मगौरव का भाव न रखें। हमें अपनी भाषा के प्रयोग को ही प्राथमिकता देनी चाहिए। जहाँ कठिनाई है, वहाँ दूसरी भाषा के शब्दों को अपनाएं, किंतु अपनी जड़ों को निरंतर मजबूत करते रहना भी बेहद जरूरी है। शब्द, भाषा का आधार हैं। यदि हिंदी शब्दों की जगह जबरन अंग्रेजी शब्द थोपे जाएंगे या अंग्रेजी के आकर्षण में हम शब्दों का गलत उच्चारण करेंगे, तो यह हमारा अपनी भाषा, संस्कृति, राष्ट्रीय अस्मिता और इतिहास के प्रति अन्याय होगा।

हमें यह ध्यान रखना जरूरी है कि दूसरी भाषाओं के शब्दों को स्वीकारने में हम अपनी भाषा की उपेक्षा करके अपने पाले में ही गोल न कर दें। अंग्रेजी के आकर्षण में हम सरल शब्दों को भी अंग्रेजी शब्दों से प्रतिस्थापित न कर दें। दूसरी भाषा के शब्दों को स्वीकार करते समय हम अति उदारता में पड़कर अपनी भाषा के स्थापित शब्दों को खत्म न कर दें। केवल उन शब्दों को अपनाएं जो हमारे पास नहीं हैं। अपनी भाषा के प्रचलित शब्दों की जगह दूसरी भाषा को न दें, अन्यथा हिंदी शब्द प्रयोग से बाहर होकर, दुरूह हो जाएंगे और अंतत: विलुप्त हो जाएंगे। भाषाई रूप से उदार रहते हुए भी हमें इस दुष्प्रभाव के प्रति सचेत रहना होगा।

***

योगेंद्र कुमार सक्सेना
ग्रेटर नोएडा-गौतमबुद्ध नगर-उत्तर प्रदेश मो. 9871395282

प्रश्नों में जीवन

महेंद्र बाबू एक लंबी राजकीय सेवा के बाद सेवानिवृत्त होकर अपने शहर प्रयागराज आ गए थे। यहीं उनका बचपन भी गुजरा, शिक्षा प्राप्त और यहीं से उनका राजकीय सेवा में चयन हुआ था। यहां आकर मानो उनका कालचक्र ही घूम गया हो। महेंद्र बाबू की एकमात्र संतान पुत्र श्वेतांक था। वे और उनकी पत्नी माधवी उसे खूब प्यार करते थे। श्वेतांक अत्यंत मेधावी था। महेंद्र बाबू ने उसे उच्चतर शिक्षा के लिए अमेरिका भेज दिया। अमेरिका में भी श्वेतांक ने अपनी मेधा का लोहा मनवाया। उसने अमेरिका में ही विवाह भी कर लिया। अपने माता पिता को उसने यह शुभ समाचार दिया तो महेंद्र बाबू तथा माधुरी अवाक रह गए परंतु उन्होंने श्वेतांग को बधाई ही दी थी। श्वेतांक अपनी पत्नी शिवांगी के साथ विवाह के 7 महीने बाद भारत आया। महेंद्र बाबू और माधवी को लगा जैसे उनका संसार ही वापस आ गया है पर श्वेतांक 7 दिन उनके साथ और 10 दिन ससुराल में रहकर अमेरिका वापस चला गया।

समय धीरे-धीरे गुजरता गया श्वेतांक को रोहन के रूप में पुत्र रत्न की प्राप्ति हुई। रोहन जब 5 माह का हुआ तब श्वेतांक उसे अपने दादा दादी से मिलवाने भारत लाया। महेंद्र बाबू अब बीमार रहने लगे थे। उन्हें लिवर में किसी गंभीर बीमारी की शंका डॉक्टर ने जताई थी और हर तीन माह में चेकअप कराने की सलाह दी थी। यह श्वेतांक के भारत दौरे में ही घटित हुआ। पिताजी के सारे टेस्ट करा कर वह अमेरिका वापस लौट गया।

अब श्वेतांक अपनी कंपनी में जनरल मैनेजर बन गया। अब उसकी जिम्मेदारियां बढ़ गईं और साथ ही व्यस्तता भी। धीरे-धीरे उसके फोन आने कम हो गए। अब महेंद्र बाबू ही फोन करते तो वह कभी-कभी बात कर लेता था। धीरे-धीरे वह मैसेज से अपनी बात कहने लग गया था। महेंद्र बाबू का स्वास्थ्य बिगड़ता जा रहा था। उन्हें कल अपने चेकअप के लिए जाना था। उन्होंने श्वेतांक को फोन किया किंतु उसने 'पापा बाद में बात करूंगा।' कह कर फोन काट दिया था। "श्वेतांक का फोन आया था क्या?" महेंद्र ने अपनी पत्नी माधवी से पूछा।

"उसने बताया तो था कि उसकी मीटिंग है, वह बाद में बात कर लेगा।" माधुरी ने उत्तर दिया "पर वह कल रात की बात थी और अब तो आज शाम के 7 बज गए हैं।" महेंद्र ने चिंतातुर होकर कहा।

"आपको भी बस बेचैनी लगी रहती है। सोचते ही नहीं कि इस समय अमेरिका में वह अपने ऑफिस में होगा। कर लेगा बात, ज्यादा जल्दी है तो आप क्यों नहीं फोन कर लेते हो?" माधुरी बोली

"पर वह तो बस मैसेज कर देता है, फोन कहां उठाता है। मेरे फोन के बाद 24 घंटे हो चुके हैं। उसे फोन तो करना चाहिए था। माता-पिता की तो जैसे उसे चिंता ही नहीं है। जानता है मेरा कल मेडिकल चेक अप है, कम से कम इसके बारे में तो पूछ ही सकता था।" महेंद्र ने उदासी भरे स्वर में कहा।

"उसे मालूम है आपको क्या बीमारी है और चेकअप के बारे में, इसमें नया क्या है? वह बड़े ओहदे पर है, व्यस्त रहता है, आपको भी यह समझना चाहिए। शिवांगी भी ऑफिस जाती है, रोहन को भी स्कूल जाना होता है। इतना परेशान मत हुआ करो।" माधवी ने दिलासा दी ।

"यह तो मैं भी जानता हूं, पर क्या हम लोगों के प्रति की कोई जिम्मेदारी नहीं है? हमारे लिए उसके पास कोई समय नहीं है। मैं अभी जाता हूं गोपाल के

यहां, थोड़ी देर में आऊंगा।" महेंद्र ने कहा।
"ठीक है,चले जाओ पर 9 बजे तक जरूर आ जाना। श्वेतांक का गुस्सा खाने पर मत निकालना"

गोपाल महेंद्र बाबू के घर के पास ही रहते थे। यह उनके बचपन के मित्र थे। उनका परचून का व्यापार था। उनका बेटा, श्याम इस व्यापार में हाथ बँटाता था। वह अपने माता-पिता का बहुत ध्यान रखता था। पढ़ने लिखने में मेधावी ना होने के कारण गोपाल ने उसको ग्रेजुएट करा कर अपने साथ ही व्यापार में लगा लिया था। श्याम की पत्नी सुधा बहुत अच्छी तथा मेहनती थी। उसने सारे घर की जिम्मेदारी संभाल रखी थी। गोपाल उसकी प्रशंसा करते नहीं थकते थे। महेंद्र बाबू को गोपाल के बच्चे ताऊ जी कहकर बुलाते थे। गोपाल भी महेंद्र बाबू को भाई साहब ही कह कर बुलाते थे। यही एक ऐसा परिवार था जहां महेंद्र बाबू अक्सर आते जाते थे। यहां उन्हें मानो अपना परिवार मिल जाता था। श्याम के बच्चे मोनू और गुड़िया तो बड़े बाबा से ही चिपके रहते थे। इन बच्चों को देखकर उन्हें श्वेतांक का बचपन याद आ जाता था। व्यथित महेंद्र बाबू जब गोपाल के पास पहुंचे तो गोपाल ने उनकी मनोदशा का अनुमान लगा लिया। माहौल को हल्का करने के लिए पूछा, "अरे भाईसाहब, कहां खोए हो? क्या आज भाभी ने ठीक से चाय नहीं पिलाई"?
"नहीं ऐसी कोई बात नहीं है, बस ऐसे ही आज मन कुछ उदास सा है। कल मेरा चेकअप भी है"।
"अरे! तो श्याम आपके साथ जाएगा। उससे मैंने कहा तो बोला उसे मालूम है और कल आपके साथ जरूर जाएगा। आप चिंता ना करें"।
"नहीं ऐसी कोई बात नहीं। मैं देख लूंगा, श्याम को भी तो जरूरी काम रहता है। दुकान पर वही तो सारा कुछ देखता है। उसे क्यों परेशान करते हो?" महेंद्र बाबू ने झिझकते हुए कहा।
"क्या बात करते हैं भाईसाहब? श्याम भी आपका बच्चा है और आपकी तबीयत ठीक नहीं है तो यह उसका फर्ज है कि वह आपके साथ जाए। आप संकोच न करें। वह जरूर जाएगा। अभी तो आप यह बताएं कि चाय पिएंगे या कॉफी"?
"आप तो जानते ही हैं कि मुझे सुधा बिटिया की चाय ही ज्यादा अच्छी लगती है। सुधा अदरक की चाय ले आई। तभी श्याम भी आ गया। उसने महेंद्र बाबू के पैर छुए और बोला, "ताऊ जी, कल तो आपको चेकअप के लिए जाना है। सुबह 9 बजे पहुंचना है। हम 8:00 बजे चलेंगे, मैं आपको ले लूंगा। आप समय से तैयार हो जाइएगा।"
"तुम सदा सुखी रहो, बेटा" महेंद्र बाबू ने अत्यंत भावुक होकर कहा। फिर बोले, "तुम कितने भाग्यशाली हो गोपाल, तुम्हें ईश्वर ने श्रवण कुमार दिया है। सबकी चिंता करता है। भगवान इसे सदा सुखी रखे!! गोपाल ने उनका हाथ थाम कर कहा, "सब आपका ही आशीर्वाद है।"

घर पहुंचे तो देखा माधवी दरवाजे पर बैठी उनकी राह देख रही थी। उसने जल्दी से खाना परोसा। महेंद्र बाबू न जाने किस विचार सिंधु में खोए थे? खाते-खाते माधवी से बोले, "कितना अच्छा होता श्वेतांक भी पढ़ने में कमजोर होता।"

माधवी की आंखें छलछला आईं। अपने आंसुओं को पी कर महेंद्र बाबू के मुंह पर हाथ रख कर बोली, "क्यों दुखी होते हैं, मैं तो हूँ न! आप क्यों चिंता करते हैं?"

***

विपिन जैन
गाजियाबाद - उत्तर प्रदेश
मोबाइल 9873927 829

पापा की किताबें

मनुष्य के अंतिम संस्कार के साथ ही जीवन से जुड़े सभी मसले समाप्त नहीं होते, कुछ खाते बंद कर दिए जाते हैं और कुछ खाते चलते रहते हैं। कुछ शॉर्ट टर्म खाते होते हैं, कुछ लाँग टर्म। खोने और पाने का सिलसिला जीवन भर तो चलता रहता ही है, जीवन के बाद भी कुछ बाकी रह जाता है। किसी की यादें, उसकी प्रवृतियां, शौक और स्वभाव जीवन भर साथ चलते हैं। पापा की देह अग्नि के सुपुर्द करने के बाद चाहे हमारा सांसारिक रिश्ता मिट गया हो पर मन का रिश्ता जीवन भर कहां खत्म होता है। उनकी इच्छाएं, आस्थाएं, राग-विराग आज भी छाया की तरह साथ चलती नजर आती हैं। पापा का जाना आकस्मिक तो नहीं था पर जल्दी जाना दुखी करता है। थोड़ी सी बीमारी ही उनके जीवन को लील गई। यूं तो उनका जीवन साधारण ही था पर कुछ बातें सबसे अलग थीं। वह हमेशा मददगार बने रहते और किसी को माफ करने की मानसिकता बनाए रखते थे। गुस्सा भी कम आता था, पर जब आता था तो हद पार कर जाता था। सबकी अच्छी बुरी बात सह लेते थे। मम्मी की हर कड़वी बात सह लेते थे। कोई प्रतिक्रिया न देते थे।

पापा ने जीवन में कोई शौक नहीं पाला, बस किताबें ही लाने का शौक रहा। जैसे किताबें ही उनके लिए पूजा थी और किताबों में ही उनकी भक्ति और आस्था थी। मम्मी बार-बार कहती 'इन किताबों का क्या करोगे? बाद में कौन संभालेगा? आगे कोई देखने वाला नहीं लग रहा। अब तुम्हारी उम्र भी ज्यादा पढ़ने की ना रही और आंखों की रोशनी भी कम होती जा रही है। सब चीजें उम्र के साथ अच्छी लगती हैं। अगर यही अलमारी यहां से हटा दी जाए तो अंशुल की कंप्यूटर कि मेज यहां रखी जा सकती है। उसे वहाँ कमरे में पढ़ने में परेशानी होती है।' पर पापा इस बात पर राजी नहीं हुए। ज्यादा पढ़ने के शौकीन तो नहीं थे सिर्फ किताब में इकट्ठा करने का और अलमारी में सजाने का शौक था। किसी नई किताब का जिक्र सुनते ही उसे घर लाने को लालायित हो जाते थे।

अब मेरे सामने मुश्किल यही है कि किताबों के अलमारी कहां ले जाऊं। मम्मी का मन भी इन दिनों बदला हुआ सा है। मैं हिम्मत नहीं कर पा रहा कि पापा के किताबों के अलमारी शिफ्ट करने की बात कर सकूं। पापा के जाने के बाद उनकी वाचालता उदासीनता में ढ़ल गई है। वह सक्रियता कहां गई जो अपना हर बात में दिखती थी? हर एक निर्णय करने में वह अग्रणी रहती थीं। पापा की अलमारी जब शिफ्ट करने की बात जोरों पर थी तो वह गुस्से से बिफर गए थे – 'मेरे जीते जी अलमारी कहीं शिफ्ट नहीं होगी। एक मेरी अलमारी तुम्हें भार लग रही है? तुम्हें क्या पता किताबों का महत्व क्या होता है? किताबें वही नहीं होती जो कोर्स में पढ़ाई जाती हैं। यहां हर चीज का महत्व है, बस किताबों का नहीं है। सब कहते हैं कि बच्चों में पढ़ने का चलन किताबों से नहीं रहा, लैपटॉप से ही बच्चे पढ़ते और सीखते हैं, मगर मेरा रिश्ता इनसे इंसान जैसा है। घर में चीजों का भंडार भरा है, ढेरों कपड़े बर्तन फालतू की चीजें तुम्हें उपयोगी लगती हैं,

उनका कोई हिसाब नहीं है। बस किताबें ही हिसाब मांगती हैं? इनसे अच्छा कोई दोस्त नहीं होता। कम से कम मेरे जीते जी तो इन्हें मेरे सामने रहने दो। यह समझ लो मेरे प्राण इन्हीं में बसते हैं।

पापा के जाने के बाद उनके संस्कार से जुड़े सभी कामों में अपनी इच्छा प्रकट करने वाली मम्मी सिर्फ किताबों की अलमारी को लेकर चुप है। कंप्यूटर यहां पर लाना कोई बड़ा मसला नहीं है पर मम्मी की मर्जी न देखकर कुछ कहने की हिम्मत नहीं हो रही है। जाने उन पर कैसी प्रतिक्रिया हो। पहले कहती रही कि अलमारी हटे तो यहां जगह बन जाएगी, मगर अब चुप हैं। अब उनकी खामोशी ही कुछ बोलती है। दूसरे तीसरे दिन किताबों को तरतीब से लगाने में जुटी दिखाई देती हैं। पापा के मेलों में जाकर किताबें खरीदने, पढ़ते-पढ़ते सो जाने, किसी आयोजन में किताब भेंट करने पर मजाकिया टिप्पणी करने वाली मम्मी अब उन्हीं किताबों को संभलती दिख जाती थीं। असल में पापा के पुस्तक प्रेम की जड़ें दादाजी से आई थीं। उन्हें भी पत्रिकाओं को जिल्द-बंद कराने का शौक था।

अब बचे कामों में मुझे अलमारी शिफ्ट करना ही दिखाई देता है पर मां का चुप रहना कठिनाई पैदा कर रहा है। मैंने अपने शहर के छोटे पुस्तकालयों से बात की ताकि पापा की पुस्तकों को वहाँ दान किया जा सके किंतु वहाँ के संचालकों ने यह कहकर पुस्तकें लेने से इंकार कर दिया कि हमारे पास पहले ही रखने की जगह नहीं है।

एक दिन मैंने मां के सामने सुझाव रखा कि गांव में हमारा जो मकान खाली पड़ा है, क्यों न वहाँ पिताजी की स्मृति में एक लाइब्रेरी बना दी जाए। उस पुस्तकालय में पापा की पुस्तकें भी रखी जा सकेंगी और उनका सही उपयोग भी हो सकेगा। किंतु माँ इस विचार से सहमत नहीं हुईं, और एक ठंडी प्रतिक्रिया देकर चुप हो गई – 'जो तुम्हें अच्छा लगे, कर लो।' मैंने अपनी बात पर जोर दिया तो कहने लगी – 'इस अलमारी को तो यहीं रहने दो, मेरे कपड़ों की अलमारी, जो फालतू कपड़ों से भरी हुई है और जिसमें बहुत सी बेकार की साड़ियां हैं, जो मेरे काम भी नहीं आती, उस अलमारी को शिफ्ट कर दो। उससे यहां ज्यादा जगह बनेगी। एक यही तो उनकी निशानी रह गई है जिसे देखकर मैं उन्हें याद कर लेती हूं। जो किताब मैं छूती हूं उसमें उन्हीं की तस्वीर नजर आती है।' इसके आगे उनके शब्द बिखर गए और आंखों से आंसू चू पड़े। माँ मेरे मन की बात जान गई थी और इसलिए उन्होंने अपनी अलमारी को हटाने की बात कह कर एक प्रकार से मेरी समस्या का समाधान भी सुझा दिया था।

अब मैंने उस अलमारी को हटाने के बारे में जिक्र करना बंद कर दिया है। मैं माँ की संवेदनाओं को समझ गया हूँ। अब मैं भी कभी-कभी उस कमरे में जाता हूं तो कोई किताब निकाल कर यूं ही देखने लगता हूं, पढ़ता नहीं हूं, पर मुझे यों ही उन्हें देखना अच्छा लगता है। मुझे लगता है कि इस अलमारी के लिए यही सबसे ठीक जगह है और इन किताबों के लिए भी इस कमरे से बेहतर जगह कोई नहीं है।

***

डॉ. टी. महादेव राव
विशाखापट्टनम-आंध्र प्रदेश—मो.9394290204

लघु कथाएं

मोहभंग

सावित्री सोच रही थी वह अब तक क्यों नहीं आया? पिछले चार दिनों से तो इस समय आया करता था। इतने में ठेकेदार की आवाज गूंजी "खड़े-खड़े क्या कर रही है? चल गमला उठा और सीमेंट पहुंचा!"

बातों की कटुता को विस्मृत करती वह गमला उठाने लगी कि नजर रास्ते पर चली गई। "अरे वह तो आ रहा है! पल भर के लिए हृदय की धड़कन तेज हो गई।

सीमेंट पहुंचाते पहुंचाते वह सोचने लगी "काश! मेरी किस्मत अच्छी होती! मुंह बोले चाचा चाची के पास इस तरह सूखी और बेरंग ज़िंदगी तो न बिताती। यह जो इस तरह रोज मुझे देखता है, इरादा क्या है इसका? क्या मुझे सचमुच चाहने तो नहीं लगा? अपने विचारों से वह शर्मा गई! बादामी रंग लाल रंग में बदलने लगा चेहरे का।

गंदे हाथों को नल पर धोती हुई वह कनखियों से उसे देखती रही। वह भी एकटक उसे देख रहा था। कितना अच्छा लग रहा है। काश! मैं इसकी पत्नी होती। एक छोटा सा घर होता। बाल बच्चे होते। इसकी गृहस्थी संभालती, तो शायद यह अभावों से भरी जिंदगी तो न होती सोचते हुए हाथ धो रही थी।

आंचल से हाथ पोंछते हुए वह उसे देखने लगी। यकायक देखता हुआ वह हाथ के इशारे से उसे बुला रहा था। सावित्री थोड़ा सकुचा रही थी कि कहीं कहेगा तो नहीं कि तुम मुझे पसंद आ गई हो। मैं तुम्हें चाहने लगा हूं। मेरे सपने शायद...। सोचती हुई वह उसके पास पहुंची। एक बार उसे जी भर के देखने के बाद उसने नई नवेली वधू की तरह जमीन पर नजर टिका ली।

"सुन!"

आशाभरी नजर उठाकर सावित्री ने उसे देखा। अपनी एक आंख दबाते हुए वह बोला, "क्यों री! कितना पैसा लेती है तू एक रात का? बता!"

सावित्री की आंखों से आँसू बह रहे थे और कोमल भावनाओं से बना उसका महल भरभरा कर ढह रहा था।

****

इंद्रजाल

'नमस्ते, आइए, आइए', जीप से उतरते हुए अभियंता को देखकर सादर स्वागत किया ठेकेदार अरविंद ने। अभियंता का चेहरा मुरझाया हुआ था। ऐसा लगता था मानो अभी-अभी उन्होंने किसी की मृत्यु का समाचार सुना हो।

'आपने स्वयं आने का कष्ट कैसे किया? 'खबर करते, तो मैं हाजिर हो जाता'।

'यहां तो जान पर बन आई है, अरविंद!'

'किसकी जान पर सर, आपकी या मेरी'?

'सबकी जान पर... पांचवें किलोमीटर से दसवें किलोमीटर तक सड़क के किनारे पेड़ लगाने का ठेका हमने तुम्हें दिया था। पंद्रह लाख रुपए के बिल का भी तुम्हें भुगतान कर दिया गया।'

'याद क्यों नही उनमें से हम लोगों ने अपने अपने हिस्से भी बांट लिए थे। अब क्या मुसीबत आन पड़ी?'

'वही जान पर बन आई है। पेड़ रोपे ही नहीं गए हैं। तुम जानते हो, हमारा विभाग जानता है। इसी बात की शिकायत मंत्री जी से किसी दुश्मन ने की है, साथ ही आरोप लगाया है कि योजना का पूरा पैसा हम लोग डकार गए। अब मंत्री जी स्वयं निरीक्षण करने आए हुए हैं और डाक बंगले में ठहरे हैं।'

'ठहरने दीजिए! हमें किस बात का डर? पेड़ों को रोपने का उनके संरक्षण के बाबत आपके विभाग के कर्मियों ने जो प्रमाण पत्र दिए हैं वे दिखला दीजिए।'

'वे कागजात नहीं देखेंगे। स्वयं पेड़ों का निरीक्षण करेंगे। हाल ही में भ्रष्टाचारियों को सबक सिखाने की प्रतिज्ञा भी की है उन्होंने।'

अभियंता की इतनी घबराहट के बावजूद अरविंद के चेहरे पर शिकन न थी। आराम से सिगरेट पी रहा था। 'अरविंद तुम्ही बचा सकते हो! वरना मेरी नौकरी तो गई। मामला भी दर्ज होगा। ' अभियंता ने अरविंद के हाथ पकड़ कर कहा .. 'मेरी इज्जत बचा लो, अरविंद!'

अरविंद ने पूछा 'मंत्री जी पेड़ कब देखेंगे?'

'कल सुबह छह बजे कार से पेड़ देखने निकलेंगे।'

'निश्चिंत होकर जाइए। मंत्री जी के निरीक्षण के समय पेड़ सड़क के किनारे होंगे।'

'हमने तो पौधे रोपे ही नहीं आज अचानक एक वर्ष की उम्र के फलते फूलते पेड़ कहाँ से?'

बात को बीच में काटते हुए अरविंद ने कहा, 'वह मुझ पर छोड़ दीजिए। आप जैसा चाहते हैं वैसा ही होगा। जाइए चार पैग व्हिस्की गले से उतार कर आराम से पड़े रहिए।' अरविंद के स्वर में आत्मविश्वास झलक रहा था।

सुबह-सुबह मंत्री जी निरीक्षण के लिए निकले। उनके पीछे पीछे चार पांच मोटरों में चारण भाट थे। अभियंता कार में मंत्री जी के बगल में थे। ए सी कार में भारी ठंड के बावजूद अभियंता पसीने से लथपथ हो रहे थे। पांचवें किलोमीटर के बाद सड़क के दोनों और फूलों फलों से लदे पेड़ देखकर प्रसन्नता और आश्चर्य से अभियंता के हृदय की धड़कन बंद होते होते बची।

यही है न आपके द्वारा रोपे गए पेड़? मंत्री जी के प्रश्न से अभियंता की तंद्रा टूटी।

जी सर। किसी दुश्मन ने आपको गलत शिकायत भेजी है। देखिए न किस तरह फल फूल रहे हैं ये पेड़। मंत्री जी ने मुस्कुरा कर अभियंता से सहमति व्यक्त की। छठवें किलोमीटर के बाद आगे न देखने का इरादा लिए मंत्री जी लौट आए। दोपहर लंच के बाद वे राजधानी लौट गए।

जहाँ कल शाम तक एक पौधा भी न था, रातों-रात पौधे बढ़कर एक वर्ष के पेड़ कैसे हो गए? कैसे फले फूले? काफी सिर पटकने के बाद भी अभियंता की समझ में न आया। यह हाथ की सफाई थी या इंद्रजाल? मंत्री जी के जाने के बाद इत्मीनान की सांस लेते हुए वे अरविंद के पास पहुंचे और यही प्रश्न पूछा। रहस्यमय हंसी बिखेरते हुए अरविंद ने बताया, 'सर, वे पेड़ नहीं थे। बड़ी-बड़ी डाल थीं जिन्हें बड़े-बड़े वृक्षों से कटवा कर रातों-रात मजदूरों से गड़वाया है। अभियंता मुंह फाड़े देखने के सिवाय कुछ न कर सके।

***

पूनम सुभाष
कौशांबी – गाजियाबाद मो. 9999845402

मदद

सरकारी नौकरी की अच्छी पदवी से रिटायरमेंट तक तो अजय कुमार जी सरकारी निवास में बड़े सुख-आराम से रहते रहे। लेकिन रिटायरमेंट की क्या कहें फिर न तो ऑफिस अपना रह जाता है और न ही सरकार का दिया घर। यह तो अच्छा हुआ सरकार ने आवास ऋण की इतनी बढ़िया सुविधा दे रखी थी कि बढ़िया वेतन की बचत और ऋण की रकम से वह एक खूबसूरत बंगले के स्वामी थे। समस्या केवल थी तो घर बदलने की थी उस पर बंगले की खाली पड़े पड़े रहने से उसमें तुरंत शिफ्ट करने लायक हालत नहीं रह गई थी। इसीलिए उन्होंने उसमें कुछ मरम्मत और पेंट आदि करवाना उचित समझा। उधर विभाग वालों से भी सरकारी नियमों के अनुसार शिफ्टिंग के लिए 6 माह का अतिरिक्त समय मिल गया था।

बंगले की मरम्मत का कार्य एक ठेकेदार को सौंप दिया था। जिसने काम के साथ साथ कई तरह की परेशानियां भी बढ़ानी शुरू कर दी जिसकी अजय कुमार जी को बिल्कुल आदत नहीं थी। ऊंचे पद ने हमेशा रोब-दाब से काम करवाया था मगर अब वह रूतबा भी नहीं था। आखिर वह रोज खुद ही बंगले पर जाकर काम की निगरानी करने लगे खैर खुद ही मिस्त्री - मज़दूर इकट्ठे करके लगे हुए थे अपने काम करवाने के लिए।

कभी रेत तो कभी सीमेंट तो कभी किसी न किसी सामान की फरमाइश पूरी करने में लगे हुए थे। अकेले काम करवाते करवाते थकान के साथ-साथ बोरियत भी बहुत हो रही थी। सोच रहे थे कि पैसे से सब काम हो जाते हैं लेकिन यहां तो समय और पैसे के साथ-साथ उर्जा भी खर्च हो रही थी जो उन्हें सबसे अधिक खराब बात लग रही थी। आज तक इस प्रकार के मज़दूर-वर्ग से उनका सीधा सामना नहीं हुआ था। वैसे भी इस वर्ग को उन्होंने हमेशा हेय दृष्टि से ही देखा है।

जिस काम में एक सप्ताह लगना चाहिए था उसमें ठेकेदार की धूर्तता से दो सप्ताह से अधिक समय लग गया। खैर किसी तरह काम तो पूरा हो चुका था अब बारी थी सामान समेटने और सफाई आदि करवाने की। आस-पास के पड़ोसियों से पूछताछ की तो पता चल गया कि यह बड़े मिजाज का शहर है यहां आप किसी से मदद के हाथ की आशा नहीं लगा सकते।

बाहर के लॉन की ओर ढेर सारी रेत बिखरी पड़ी थी उस पर मौसम का मिजाज भी आंधी का संकेत दे रहा था यानि आज और अभी इसी कार्य को सम्पन्न करवाना जरूरी था। सभी मजदूरों ने दिहाड़ी खत्म होते ही अपने बस्ते समेट लिए थे। उनकी समस्या देखने को भी तैयार नहीं थे। उन्होंने पैसे का लालच दिखाया तो उन्होंने भी अपना लालच चार गुना दिखा दिया जो उनकी सहनशीलता से परे था।

काम करने वाले जा चुके थे। अजय जी उनका हिसाब करके बंगले के विशालकाय गेट से बाहर निकले तो देखा कुछ मजदूरों के किशोरावस्था के बच्चे पत्थरों और गेंद से कोई खेल खेल रहे थे। उन्होंने एक बच्चे को रोककर कहा "अरे बेटा मुझे तुम्हारी कुछ मदद चाहिए थी।" "अरे अंकल कैसी मदद अभी रूको मैं सबको लेकर आता हूँ।" उस बच्चे ने अपने अन्य 3 साथियों को

साथ लिया और अजय जी के साथ चला आया। अजय जी ने सारा काम समझा दिया। देखते ही देखते बच्चों ने काफी रेत बोरियों में भरकर अंदर रखवा दी। रेत तो मगर अभी भी बची थी मगर बोरियां कम पड़ गईं थीं। तभी एक बच्चा तेजी से बाहर गया और दस मिनट के अंदर 3-4 प्लास्टिक के बोरे ले आया। बच्चों ने बची हुई रेत भी समेट डाली। सारी रेत आधे घंटे में ही समेटी जा चुकी थी। अजय जी प्रसन्न और हैरान भी थे। उन्होंने बच्चों को बुलाकर प्यार से 50 -50 के नोट देने चाहे तो एक बच्चा तुरंत बोल उठा। "अंकल आपने तो मदद के लिए कहा था मजूरी के लिए थोड़ी न।" हम मदद के लिए कोई पैसे नहीं लेते। अजय अब आवाक रह गए थे लेकिन इस तरह बिन पैसे भी कभी किसी से काम करवाना अच्छी बात नहीं। उन्होंने कहा "अच्छा चलो चॉकलेट खाओगे"। उनमें से ही एक बच्चा तुरंत बोल उठा "हम गंदी आदत नहीं डालते अंकल, हमारे पास इतने पैसे नहीं होते कि महंगी चॉकलेट खाएं इसलिए सिर्फ घर का खाना खाते हैं।"

तभी जो बच्चा इन तीनों को लेकर आया था तो बोल उठा 'अंकल प्लीज़ हमें खेलने जाने दो न, हाँ अगर आपको कभी भी मदद चाहिए तो हम यहीं शाम को स्कूल से आने के बाद खेलते हैं। एक बात और अंकल हम मेहनती बच्चे हैं, मदद करते हैं, मजदूरी नहीं।'

अजय जी को विश्वास नहीं हो रहा था कि अभावों में जी रहे यह बच्चे हर चीज का भाव समझते हैं और सबसे बड़ी बात यह कि मदद की भावना में कोई प्रत्याशा नहीं रखते। अजय जी को बार-बार यह शब्द कचोट रहे थे 'हम मेहनती बच्चे हैं, मदद करते हैं, मजदूरी नहीं।'

***

'रश्मिरथी' से ....

और, वीर जो किसी प्रतिज्ञा पर आकर अड़ता है,
सचमुच, उसके लिए उसे सब कुछ देना पड़ता है।
नहीं सदा भीषिका दौड़ती द्वार पाप का पाकर,
दुःख भोगता कभी पुण्य को भी मनुष्य अपनाकर।

पर, तब भी रेखा प्रकाश की जहां कहीं हँसती है,
वहाँ किसी प्रज्वलित वीर नर की आभा बस्ती है।
जिसने छोड़ी नहीं लीक विपदाओं से घबरा कर,
दी जग को रौशनी टेक पर अपनी जान गंवाकर।

नरता का आदर्श तपस्या के भीतर पलता है,
देता वही प्रकाश, आग में जो अभीत जलता है।
आजीवन झेलते दाह का दंश वीर-व्रतधारी,
हो पाते तब कहीं अमरता के पद के अधिकारी।

प्रण करना है सहज, कठिन है लेकिन, उसे निभाना,
सबसे बड़ी जांच है व्रत का अंतिम मोल चुकाना।
अंतिम मूल्य न दिया अगर, तो और मूल्य देना क्या?
करने लगे मोह प्राणों का - तो फिर प्रण लेना क्या?

सस्ती कीमत पर बिकती रहती जब तक कुर्बानी ,
तब तक सभी बने रह सकते हैं त्यागी, बलिदानी।
पर, महंगी में मोल तपस्या का देना दुष्कर है,
हंस कर दे यह मूल्य, न मिलता वह मनुष्य घर घर है।

जीवन का अभियान दान-बल से अजस्त्र चलता है,
उतनी बढ़ती ज्योति, स्नेह जितना अनल्प जलता है।
और दान मे रोकर या हँसकर हम जो देते हैं,
अहंकार-वश उसे स्वत्व का त्याग मान लेते हैं।

यह न स्वत्व का त्याग, दान तो जीवन का झरना है,
रखना उसको रोक मृत्यु के पहले ही मरना है।
किस पर करते कृपा वृक्ष यदि अपना फल देते हैं?
गिरने से उसको संभाल क्यों रोक नहीं लेते हैं?

सरिता देती वारि कि पाकर उसे सुपूरित घन हो,
बरसे मेघ, भरे फिर सरिता, उदित नया जीवन हो।
आत्मदान के साथ जगज्जीवन का ऋजु नाता है,
जो देता जितना बदले में उतना ही पाता है।

डॉ. प्रभाकर जोशी
देवप्रयाग-उत्तराखंड मो. 9411144392

अति बचत

गुरु जी ने अपने पांच शिष्यों के सामने मेज पर पांच-पांच सौ रूपए के पांच नोट रख दिये। आज वे अपने शिष्यों की परीक्षा लेना चाहते थे। गुरु जी ने शिष्यों को आदेश सुनाया, 'सभी को पांच सौ का एक-एक नोट दे रहा हूँ। आपको अगले पंद्रह दिनों के भीतर अपने तरीके से खर्च करना है और पंद्रह दिन के बाद मुझे यह सूचित करना है कि आपने इसे किस प्रयोजन से खर्च किया है।' पाँच शिष्यों ने गुरु जी की आज्ञा मानते हुए नोट ले लिए।

पंद्रह दिन बाद पांचो शिष्य गुरु जी के सामने उपस्थित हुए। किसने कैसे और किस प्रयोजन से अपने पाँच सौ का नोट खर्च किया यह जानने की सभी में उत्सुकता थी। गुरु जी ने पहले शिष्य से पूछा, 'बताओ पांच सौ का नोट कैसे खर्च किया?' गुरु जी को प्रणाम करते हुए शिष्य बोला, 'मैंने पांच सौ रूपए से कुछ साधु संतो को भोजन करवाया तथा कुछ जरूरत मंद विधार्थियों को पुस्तकें व कॉपी खरीद कर दीं।' 'उत्तम', गुरु जी बोले। दूसरे शिष्य ने बताया, 'मैंने माता जी के लिए दवाइयां ली तथा छोटे बहन-भाई सहित अपने लिए भी कुछ कपडे खरीदे।' 'उचित', गुरु जी बोले। तीसरे शिष्य ने कुछ ठिठकते कहा, 'गुरु जी, पांच सौ का नोट किसी को ब्याज पर उधार दे दिया है। वह एक साल बाद डेढ़ सौ रूपए बढ़ा कर लौटाएगा।' 'ओह, क्या बात है' गुरु जी मंद-मंद मुस्करा उठे। चौथा शिष्य सकुचाते हुए बोला, गुरु जी, मैं तो अपने मित्रो, जानने वालो के साथ एक होटल में गया। वहाँ उनकी इच्छानुसार उन्हे खिलाया पिलाया। इसमें ही पांच सौ का नोट स्वाहा हो गया।' गुरु जी हंस पड़े बोले, 'धन्य हो तुम।' आखिर में पांचवे शिष्य से पूछा कि उसने पांच सौ रूपए कहां खर्च किए तो वह गुरु जी चरण स्पर्श कर चुप खड़ा रहा। 'बोलो भई, क्या किया पांच सौ के नोट का?' गुरु जी ने उसकी ओर गौर से देखते हुए पूछा। शिष्य किसी तरह बोला, 'गुरु जी मेरी तो समझ में ही नही आया कि पांच सौ के नोट का क्या करूँ। वैसे ही रख दिया। जैसे का तैसा, मेरे ही पास सुरक्षित है।' 'अरे, तुम तो सबसे महान निकले। खर्च करने को दिए पैसे भी तुमने बचत में लगाए दिए।' वर्षो बाद सरकार ने पांच सौ के पुराने नोट बंद करने की घोषणा की तो उस शिष्य को खोजने पर भी गुरु का दिया वह पांच सौ का नोट कहीं नहीं मिला।

जब मिला तो नोट बदलने की समय सीमा खत्म हो चुकी थी।

***

संदीप कुमार सिंह
गुलावठी, बुलंदशहर (उत्तर प्रदेश) मो. 9456814243

गुरु दक्षिणा

रामप्रकाश अपने गाँव में ही एक प्राइवेट इंटर कालेज में अध्यापक थे। उनके पास पुरखों से मिली कुछ बीघे जमीन थी। अध्यापन और जमीन से मिलने वाली आमदनी से वे किसी प्रकार अपने परिवार का पालन-पोषण कर रहे थे। वे पिछले पच्चीस वर्षों से विद्यार्थियों को सच्चाई, ईमानदारी का पाठ पढ़ा रहे थे, किसी के सामने न झुकने का साहस बढ़ा रहे थे और गलत बात का विरोध करना सिखा रहे थे। आज खुद इन परिस्थितियों से सामना हुआ तो वे कैसे झुक जाएं?

रामप्रकाश सिंह चेहरे पर हताशा का भाव लिए सड़क पर पैदल चले जा रहे थे। वे बेटे की नियुक्ति के लिए प्रबंधक के यहाँ दौड़ लगाते-लगाते थक चुके थे। प्रबंधक बिना लिफाफे के नियुक्ति के लिए तैयार नहीं हो रहा था। वे मन ही मन सोच रहे थे कि इस समस्या का समाधान कैसे किया जाए? बेटे की नियुक्ति को लेकर प्रबंधक के धमकी भरे स्वर को याद कर वे सहम जाते। दिलो दिमाग में बेटे की नियुक्ति और प्रबंधक का चेहरा उनके डर को और बढ़ा रहा था। अचानक सड़क पर एस. पी. साहब की गाड़ी रुकने से उनके दिल की धडकनें और बढ़ गई। गाड़ी पीछे की ओर आई और उसमें से एस. पी. साहब को उतरते देख वे सहम गए। मन में तरह-तरह के विचार आने लगे, पता नहीं अब कौन-सी मुसीबत आने वाली है? जब व्यक्ति के जीवन में परिस्थितियां अनुकूल न हो तो प्रत्येक घटना पहले अनहोनी की तरफ इशारा करती है। यही हाल रामप्रकाश जी का भी हो रहा था।

एस. पी. साहब गाड़ी से उतरे और रामप्रकाश जी के चरण स्पर्श किए। रामप्रकाश को समझ में आ गया कि हो न हो यह उनका कोई शिष्य होगा। पर कौन सा शिष्य है? उनको याद नहीं आ रहा था। एस. पी. साहब ने अपना परिचय दिया, "सर मैं आपका शिष्य हरेंद्र प्रताप सिंह हूँ।"

एस. पी. साहब ने उन्हें अपनी गाड़ी में बिठा लिया और रास्ते में हाल चाल पूछने लगे। रामप्रकाश जी अपने चेहरे के भाव को छिपाते हुए बताते हैं कि वे अपने एक रिश्तेदार से मिलने आए हैं। वे मन ही मन सोच-विचार कर रहे थे कि जिले के इतने बड़े अधिकारी से नियुक्ति वाली बात कैसे बताई जाय? वे स्वाभिमानी व्यक्ति थे। सादा जीवन उच्च विचार में विश्वास रखते थे। कभी किसी के सामने हाथ नहीं फैलाया। आज कैसे सहायता की माँग करें? एस. पी. साहब के बार-बार पूछने पर भी उन्होंने अपनी समस्या नहीं बताई।

हरेंद्र प्रताप रामप्रकाश जी को अपने आवास लेकर पहुँचे तो उनकी हालत को देखकर उनकी पत्नी पूछने लगी, "अरे! ये आप किसे उठा ले आए और ले भी आए तो घर के अंदर क्यों ले आए?"

"ये मेरे गुरु हैं। आज मैं जो भी हूँ, इनके आशीर्वाद से हूँ।"

हरेंद्र प्रताप और उनकी पत्नी के सेवा भाव को देखकर रामप्रकाश जी को सुदामा-कृष्ण का वृत्तांत याद आ गया। बड़ी देर तक वार्तालाप चलता रहा। रामप्रकाश जी जाने को तैयार होते हैं किंतु दोनों के आग्रह पर वे रुक जाते हैं।

अगले दिन सुबह चाय-नाश्ते के बाद रामप्रकाश जी जाने के लिए आग्रह करने लगे तो हरेंद्र प्रताप ने कहा कि आपको ड्राइवर छोड़ देगा।

रामप्रकाश जी मना करते रहे कि वे चले जाएंगे पर हरेंद्र नहीं माने। हरेंद्र और उनकी पत्नी उनको छोड़ने गाड़ी तक आए।

रामप्रकाश जी थोड़ी दूर ही चले होंगे कि अपने शिष्य के सेवा भाव को भूलकर अपनी समस्या के बारे में सोचने लगे। ड्राइवर ने पूछा,"बाबूजी क्या बात है? आप बहुत चिंतित दिखाई दे रहे हैं। कुछ समस्या है तो आप बताइए।"

"नहीं, सब ठीक है। मैं ऐसे ही कुछ सोच रहा था।"

"बाबूजी! आप कुछ छुपा रहे हैं।""क्या हुआ? साहब के यहाँ रुकना अच्छा नहीं लगा?"

"अरे! ये क्या कह रहे हो। तुम्हारे साहब जैसे शिष्य बहुत कम होते हैं।"

"फिर क्या बात है बाबूजी?"

रामप्रकाश जी ड्राइवर के आग्रह को टाल न सके। वे अपनी समस्या बताने लगे,"मेरे बेटे का चयन इंटरमीडिएट कालेज में प्रवक्ता पद के लिए हुआ है। पिछले कई दिनों से उसकी नियुक्ति के लिए दौड़-भाग कर रहा हूँ। प्रबंधक द्वारा कभी कोई प्रमाण-पत्र मांगा जाता कभी कोई और आज लिफाफे की माँग की गई है। अब हम जैसे शिक्षकों के पास लिफाफा देने की हैसियत नहीं है।"

"बाबूजी मैं कुछ करूँ?"

"नहीं, मैं कल फिर प्रबंधक के पास कुछ प्रमाण-पत्र लेकर जाऊँगा। शायद कल वह मान जाएँ।"

"यदि नहीं माना तो?"

"नहीं मानेंगे तब फिर कुछ सोचूँगा।"

ड्राइवर उन्हें एक धर्मशाला के पास छोड़कर चला गया। ड्राइवर पहुँचते ही हरेन्द्र प्रताप जी से रामप्रकाश जी के बारे में बताने लगा, "सर आप सही कह रहे थे कि वे किसी बड़ी समस्या से घिरे हुए हैं लेकिन वे मुझे बताएंगे नहीं....।" फिर ड्राइवर ने सारा वृत्तांत एस. पी. साहब को बता दिया।

"अच्छा, वे प्रबंधक के पास कब मिलने जा रहे हैं?"

"सर, कल के लिए बोल रहे थे।"

अगले दिन रामप्रकाश जी बेटे को लेकर प्रबंधक के पास पहुँचे तो उसने उन्हें बड़े आदर के साथ बैठाया और घर परिवार का हाल चाल पूछने लगा। उसने चाय-नाश्ते का इंतजाम करवाया। प्रबंधक के स्वभाव में परिवर्तन को देखकर वे बहुत आश्चर्यचकित हुए। इससे पहले तो प्रबंधक ने उन्हें कभी एक गिलास पानी के लिए नहीं पूछा और आज ऐसा स्वागत-सत्कार! रामप्रकाश जी के मन में तरह-तरह के विचार आने लगे। उन्होंने सोचा कि चाय-नाश्ता कराकर अभी लिफाफे का वजन और न बढ़ा दे। फिर उन्होंने अपने बैग से कुछ प्रमाण-पत्र निकाले और उन्हें थमा दिया। प्रबंधक ने प्रिंसीपल महोदय को फोन किया और उनके बेटे की नियुक्ति तुरंत कराने के लिए कह दिया। रामप्रकाश सोच में पड़ गए कि अभी लिफाफे वाली बात कैसे की जाए? डरते-डरते उन्होंने पूछ ही लिया "सर वो लिफाफे की व्यवस्था नहीं हो पाई।"

"अरे! रामप्रकाश जी, आपसे कैसा लिफाफा? मैं तो ऐसे ही बस आपसे मजाक कर रहा था।"

***

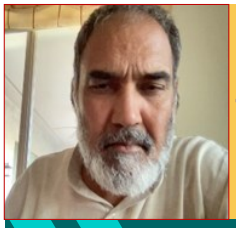

'विदेह' अरविन्द कुमार
फिनिक्स, एरीजोना, अमेरिका

उनकी डायरी

सूदखोरों की सभा में एक दिन मुझे बुलाया गया; विचार-विमर्श का बिंदु था कि उनका एक 'शिकार' – कृपया 'क़र्ज़दार' पढ़ें, उनके पैसे जो उन्होंने उसे उधार दे रखे थे, नहीं चुका रहा था। कई साल, बल्कि कई दशक हो गुज़रे थे। सूदखोरों की कमअक़्ल के चलते, वह आदमी जो क़र्ज़दार था 'जानबूझ कर उनका क़र्ज़ा नहीं चुका रहा' था। उनमें से कई तो अपने क़र्ज़े की भारी-भरकम रक़मों की सोच मात्र से पतले हुए जा रहे थे, उन्हें रातों को नींद नहीं आती थी, करवटें बदलते वे उन्हीं बड़ी संख्याओं को दिमाग़ में उलटते-फेरते रहते थे जो उनकी गंदी-सी डायरियों में गंदी-सी लिखावट में उनकी 'संपदा' के नाम से लिखी हुई थीं। किंतु अब तो उस नक़ली, मात्र मानसिक, वायवीय 'संपदा' के मूर्त रूप धारण करने का कोई संयोग बनता ही नहीं दीख पड़ रहा था; वह सब तो अब दुःस्वप्न ही लगने लगा था।

किसी का 'आधा करोड़' हो गया था – ब्याज सहित; किसी का 'लाखों' हो गया था; जबकि उन्होंने जो क़र्ज़ा मूल रूप से दिया था वह मात्र कुछ 'हज़ार' रुपयों भर का ही था। किंतु सूदखोरी ऐसी ही फसल है, दिन-दूनी रात-चौगुनी होकर बढ़ती है, और बेईमानों को आशीर्वाद देती जाती है, जबकि सीधे-शरीफ़ों का शोषण करवाती जाती है।

इन लोगों ने अपनी उथली, नक़ली अक़्ल के चलते, सभा में ग़रज़ गरजकर बोलना शुरू किया: "हमारा इतना क़र्ज़ा उसके ऊपर है, हमारा उतना पैसा उसके ऊपर है,....." और न जाने क्या-क्या। मैं देख रहा था कि वे बीच-बीच में अपनी उन डायरियों को ज़रूर दिखाने की कोशिश कर रहे थे जिनमें वह काल्पनिक 'संपदा' छपी या लिखी हुई थी, शायद; जिस पर उन्हें परम विश्वास था। उन गंदे पन्नों पर उस क़र्ज़दार के गंदे-से हस्ताक्षर भी थे। इतना विश्वास तो उन्हें शायद इस सृष्टि के कर्त्ता -धर्ता ईश्वर पर भी न रहा होगा जितना अपनी इस सोने का अंडा देने वाली डायरी-रूपा मुर्गी पर था! जिसमें उनकी लिखावट और क़र्ज़दार के दस्तख़त भी थे!

वे यह भी खीझ-खीझकर, माथा पीट-पीटकर, कहते जा रहे थे: "वह ऐसा बेईमान पहले तो नहीं था, उसने सदा 'एक-एक' का 'दस-दस' लौटाया; किंतु अब तो वह गाँव छोड़कर ही भाग गया है, कहीं दिखायी ही नहीं पड़ता, वह बड़ा बे-ईमान निकला! ....." अग़ैरह, वग़ैरह।

जब वे अपनी भड़ास निकाल चुके, तो एक 'ईर्ष्यालु' गाँव वाला जो सूदखोरी नहीं करता था बल्कि ईमानदारी और मेहनत करके खाने-कमाने और जीवन बिताने में भरोसा रखता था और ईश्वर की सत्ता में भी, उसने कहना शुरू किया: "यह एक-एक का दस-दस देना ही तो ख़तरे की घंटी थी, जो तुम्हें सुनाई नहीं पड़ी, क्योंकि तुम्हारे कानों और नथुनों में तब सिक्कों की खनक और करारे नोटों की महक भरी हुई थी जो तुम्हें सच्चाई और वास्तविकता के धरातल पर उतरने ही नहीं दे रही थी। न ही वह कमीना और कमबख़्त क़र्ज़दार कभी यह सोच पा रहा था कि वह जब कुछ कमाता ही

नहीं था तो चुका कहाँ से रहा था, सिवाय 'इधर का माल उधर करने' और 'उधर का माल इधर करने' के, सिवाय आप क़र्ज़ा देने वालों का ही माल 'एक हाथ से दूसरे हाथ में देने' के!....." इत्यादि।

लोगों को उसकी बात बहुत बुरी लगी; बुरी थी भी, क्योंकि वह परंपरागत सोच के एकदम विपरीत बात थी, सूदखोरी के, हरामख़ोरी के, सिद्धांत के एकदम ख़िलाफ़ थी, और ख़िलाफ़ थी उस नैसर्गिक सोच के जो बतलाती है कि 'जब कुछ कमाया ही नहीं जा रहा है तो लौटाया कहाँ से जाएगा!'

किंतु लालची सूदखोरों को यह नहीं दीखता! उन्हें तो बस डायरी में लिखे अंकगणित के कुछ अंक दीखते हैं, और दीखते हैं अपने लठैतों के हाथों में तेल से पुते हुए लट्ठ। परंतु इस सारे गँवई अंकगणित में एक पेंच है: 'अगर क़र्ज़ा लेने वाला भी लठैत हुआ तो?'

आख़िर में मुझे बुलवाया गया; इसी बात के लिए तो मुझे यहाँ लाया गया था। मुझे इस बेइमानी के धंधे में कुछ भी 'सिद्धांत' निर्धारित करते नहीं बन पड़ रहा था, कोई 'सिद्धांत' होता तब न बन पड़ता! फिर भी अपनी 'स्थापित' – कृपया 'तथाकथित' पढ़ें – बुद्धिमत्ता या विद्वत्ता के काँच को सबके सामने दरकने से भी तो बचाना था ही। मैंने कहा कि "आप लोग 'बेइमानी' को आपके क़र्ज़ों – जिसे आप अपनी संपदा समझे हुए थे - के डूब जाने का कारण माने हुए हैं, क्योंकि उस एक शब्द या (अ)चारित्रिक गुण के परे आपकी बुद्धि जा ही नहीं पाती, किंतु '(अ)सामर्थ्य' वस्तुतः वह शब्द या तथ्य है जो आपके विनाश का हेतु बना है: क़र्ज़दार की कुछ भी कमाने की 'असामर्थ्य'! और 'अनिच्छा' भी! वह निखट्टू आप लोगों के जाल में ऐसा फँसा हुआ था कि वह कभी सोच ही नहीं सकता था कि उसे दो पैसे मूल रूप से अपने हाथों, अपनी सामर्थ्य से, कमाने भी हैं। उसके हाथों में आपके करारे नोट घूमते रहे, इधर से उधर, उधर से इधर, और हर चक्कर में पहले से ज़्यादातर, जैसा कि कुचक्र (vicious cycle) का लक्षण होता है; और वह बौड़म उन्हें 'अपने' समझकर इधर से उधर करने में ही मगन होता रहा। अट्टहास करता रहा, जैसे बक़रीद का बकरा कटने से पहले करता है; वह – बकरा - सोच ही नहीं पाता कि आख़िर कसाई उसे इतना अच्छा-अच्छा और ज़्यादा खिला क्यों रहा है!...."

उन्हें मेरी बात बिलकुल भी अच्छी नहीं लगी, वे सत्य की खोज में वहाँ नहीं आये थे, वे सब के सब बे-ईमान लोग थे, उन्हें बे-इमानी और लूट के ही नये-नये तरीक़े और धन के और अधिक फलने-फूलने के तरीक़े जानने थे! प्रकृति (या ईश्वर कहना चाहें, कह लीजिए) किस तरह काम करती है इससे उन्हें क्या! मुझे अंततः जोड़ना पड़ा - जिसके लिए परंपरा ने बड़े अच्छे इंतज़ाम कर रखे हैं 'धर्म' और संस्कृति के नाम से – "आप लोग फ़िक्र न करें! अगले जन्म में सबका हिसाब हो जाएगा! बताते हैं, ऐसा शास्त्रों में लिखा है!"

परंतु मैंने देखा, उनकी मुख-मुद्रा संतुष्ट न थी, वे सूदखोर ठहरे, उन्हें इसी जन्म में अपना पैसा चाहिए था; उनकी डायरी तो दूसरे जन्म में उनके साथ नहीं जायेगी न!

अब मैं इसमें भला क्या कर सकता हूँ!

***

रंजीत चौरसिया
सागरपट्टी-अयोध्या -उत्तर प्रदेश, मो. 9410090195

मवेशियों की एक सभा

हमारी मेहनत से मालामाल बनते इन मानवों को देखकर हम चौपायों को एकजुट होकर एक सभा करनी पड़ी। छोटे-बड़े निरीह चौपाया जानवर, मानवों की हिंसक वृत्ति से तंग रहे हैं। 'इसका निदान अब हो गया है।' मवेशियों का राजा "साँड़" अपने अध्यक्षीय भाषण में जोर-जोर से कर रहा था। सभी जानवर साँड़ के भाषण को गौर से सुन रहे थे।

'छोटे-छोटे निरीह जीवों के प्रति मानवों के मुखिया का अहिंसक दृष्टिकोण आज हमारे लिए रक्षणीय बन चुका है। मानुषों का मुखिया होकर भी वह हम पशुओं पर तो जान छिड़कता है। एक जमाना था कि ये मनुष्य हमें बहुत तंग किया करते थे। इन्होंने अब तक हम पर बहुत कहर बरपाये हैं। हमें कहीं बैल गाड़ी में जोत देते हैं, कहीं ज्यादा भार लाद देते हैं तो कहीं हल में जोत देते थे, लेकिन अब जमाना बदला है! अब आदमी ने बहुत सी मशीनें खरीद लीं; जिससे हम जानवर अब परेशानी मुक्त हो गए हैं। अब हर जगह हमारा ही प्रभुत्व हो रहा है, खेत, खलिहान, गाँव, नगर, स्टेशन, बस अड्डे सब जगह।'

'आने वाले समय में हम लोगों का ही राज होगा।' सांड अपनी बात जारी रखता है, 'पता चला है कि चुनाव प्रचार में वे घोषणा रहे थे कि अब चौपायों और ढोरों पर किसी प्रकार का जुर्म बर्दाश्त नहीं होगा। अगर कोई ऐसा करता है तो उसको सीधे जेल की हवा खानी पड़ेगी। कटान बंद होगी। यह शुभ समाचार गीदड़ों ने आकर बताया है। अब पशुओं की तस्करी और उनकी कटाई के दिन लद चुके हैं। लगता है किसी पशु संरक्षक ने अवतार लिया है।'

साँड़ अपनी बात जारी रखता है 'इन मानवों की बर्बरता की निंदा हम चौपाए कहाँ तक करें। पहले के जमाने में मेलों में हमारी लड़ाई अथवा इनामी युद्ध को देखने के लिए बहुत सारे मानव इकट्ठा होते थे और हमारी ही बाजी लगाकर अपनी जेबें भरते थे। स्वतंत्र रूप से कभी भी इन मानवों ने हमें सांस नहीं लेने दिया है।'

नील गाय इस नीति से अत्यंत खुश होती है। खुशी में वह छलाँग भरते-भरते कई खेतों की फसल चट कर गई। रग्घू तो कई दिनों से रात-रात भर जागकर अपने खरबूजे के खेत की रखवाली कर रहा था। उसे क्या पता था कि ये नील गाय एक दिन पूरा भट्ठा ही बैठा देंगी। रग्घू की सारी आशाएं धूमिल हो गईं। पत्नी और बच्चों के कपड़े अब नहीं बन पाएंगे। माँ की अरिष्टी (क्रियाकर्म) फिर एक बार टालनी पड़ जायेगी।

मानवों की इस सरकार ने कुछ ऐसे-ऐसे कार्य कर दिखाए हैं कि हम आवारा पशुओं के लिए तो बहुत बड़ी आजादी और तरक्की के दिन आ गए हैं। भगवान इन्हें दीर्घ आयु दे, इन्हें स्वस्थ रखे। ऐसे लोग पहले से होते तो सारे जानवरों का भला हो

जाता है। हड्डी व ठठरी का दिखना बंद हो जाता। मांसपेशियों में फुलाव आ जाता। लेकिन देर आयद दुरूस्त आयद। अब हमारे दिन आ गए हैं। अब हम ढोर! खेतों में डकार भरेंगे, कुलांचे भरेंगे जो हमें छेड़ेगा, उसको अपने सींग रूपी तलवार से वार करके चित्त कर देंगे। कोई हमारा कुछ भी न बिगाड़ पायेगा। लोग चाहे तार लगायें, खाईं बांधें, कुछ भी करें लेकिन खेतों पर तो कब्जा अब हम सबका हो ही गया है।

उधर गांव की एक महिला अपने किसी रिश्तेदार से कह रही थी, अब हम बच्चों को नहीं पढ़ा सकते क्योंकि भैया सारी फसल आवारा पशु चट कर गए। अब कुछ बचा ही नहीं, उतने पैसे भी नहीं है कि चारों तरफ से घेराबंदी या तारबंदी कर सकें। इन जानवरों ने तो नाक में दम कर रखा है। खाद पानी का खर्चा भी पूरी फसल से नहीं लौट पाया, जीविका चलानी भी भारी पड़ रही है।' उधर उस महिला की आँखों से आँसू बह रहे थे और इधर मवेशियों की सभी में सांड के भाषण पर जोरदार तालियाँ बज रही थीं। सभा विसर्जित हो रही थी।

***

निज भाषा उन्नति अहै,
सब उन्नति को मूल।
बिन निज भाषा ज्ञान के
मिटे न हिय का शूल

- भारतेंदु हरिश्चंद्र

मानस भवन में आर्यजन
जिसकी उतारें आरती।
भगवान भारतवर्ष में
गूंजे हमारी भारती।

है भव्य भारत ही हमारी
मातृभूमि हरी भरी।
हिन्दी हमारी राष्ट्रभाषा
और लिपि है नागरी

- मैंथिली शरण गुप्त

कैसे निज सोए भाग को
कोई सकता है जगा,
जो निज भाषा-अनुराग का
अंकुर नहिं उर में उगा।

- अयोध्या सिंह उपाध्याय हरिऔध

सुरेश चंद शर्मा
फरीदाबाद, हरियाणा — मोबाइल 9953091619

यहाँ लघु शंका वर्जित है

जब विश्व कोरोना, युद्ध तथा आतंकवाद से जूझ रहा है, तब समाज के सभ्य, सुशिक्षित तथा अत्याधुनिक माने जाने वाले कुछ लोगों ने हवाई यात्रा के दौरान लघु शंका करके हवाई कम्पनियों के लिए एक नई समस्या खड़ी कर दी है, जिसे लेकर हवाई यात्रियों में चिंता बढ़ गई है। उन्हें लगने लगा है कि हवाई सफर पर जाते समय दो जोड़ी कपड़े अतिरिक्त लेकर जाएं ताकि आपात स्थिति में वे काम आ सकें। क्या पता कब, कौन सज्जन शराब के नशे में लघु शंका करके उनके पहने हुए कपड़े खराब कर दे।

गत 26 नवंबर को एयर इंडिया की न्यूयॉर्क - दिल्ली फ्लाइट में शंकर मिश्रा नामक व्यक्ति द्वारा 70 वर्षीय बुजुर्ग महिला के कपड़ों और सामान पर लघु शंका करने की घटना के दस दिन बाद ही 6 दिसंबर को पेरिस से दिल्ली आने वाली एयर इंडिया की फ्लाइट संख्या 142 में नशे में धुत्त यात्री ने महिला यात्री के कंबल पर लघु शंका कर दी। इसने उक्त महिला सहयात्री से लिखित माफ़ी मांगी और जेल जाने से स्वयं को बचा लिया। 8 जनवरी 2023 को पुनः एक शख्स ने इंदिरा गाँधी अंतर्राष्ट्रीय हवाई अड्डे के टर्मिनल 3 पर बेहद अश्लील तरीके से सरेआम लघुशंका की और विरोध करने वालों को भद्दी भद्दी गलियाँ दीं।

इन तीनों घटनाओं में यह समानता थी कि ये तीनों पुरुष शराब के नशे में थे और सोचने-समझने की स्थिति में भी शायद नहीं थे। हवाई जहाज में यात्रा करने वाले किसी अनपढ़, गंवार से भी ऐसी मूर्खतापूर्ण हरकत की आशा नहीं की जा सकती लेकिन सत्य यही है कि एक के बाद एक ये कुकृत्य किया गया है।

हांलाकि, हमारे देश में यह घटना कोई नयी नहीं है। सुलभ शौचालय से पहले लगभग हर खुले स्थान का सदुपयोग पुरुष वर्ग द्वारा इस कार्य के लिए करने की परम्परा रही है। जब अधिक दिनों तक एक ही दीवार का प्रयोग निरंतर इस कार्य के लिए होता था तो स्थानीय बाशिंदों द्वारा बदबू से बचने के लिए वहाँ लिखवाया जाता था- **'यहाँ ..... करना मना है'**। उन्हें उम्मीद रहती थी कि इसे पढकर कोई वहाँ अपना लघुशंका नहीं करेगा। कुछ लोग इस सूचना का अनुसरण भी करते हैं किन्तु कुछ महाविद्वान् उस इबारत से 'मना' शब्द को मिटा देते थे और फिर उसे **'यहाँ .... करना है'**, पढकर इसका अनुपालन करते थे।

अब एक नयी समस्या सामने आई है तो उसका समाधान भी ढूंढा जाना चाहिए। सुझाव है कि एयर इंडिया सहित सभी कम्पनियों को अपने परिसर में डिस्प्ले बोर्ड, बोर्डिंग-पास तथा टिकट आदि पर यह लिखकर प्रचार करना चाहिए कि एअरपोर्ट परिसर या हवाई जहाज़ में सहयात्रिओं पर लघु शंका करना सख्त मना है, अथवा कृपया लघु शंका के लिए केवल शौचालय का प्रयोग करें। ऐसा नहीं करने वाले को जेल, जुर्माना या दोनों भुगतने पड़ेंगे। इसमें कुछ डिलीट भी नहीं किया जा सकेगा। आशा की जानी चाहिए कि ऐसा करने से इन घटनाओं को रोकने में अवश्य ही थोड़ी बहुत सफलता अवश्य मिलेगी।

***

डॉ. सुभाष वसिष्ठ
नई दिल्ली - 110049 , मोबाइल: 9971839177

नवगीत

क्या करूँ

मन ललकता है तुम्हारे पास आने को
बताओ क्या करूँ ?
मन ललकता है तुम्हें ही गुनगुनाने को
बताओ क्या करूँ ?

फ़ाइलों में
वे तुम्हारी नेहयुत आँखें
जोड़ देतीं
व्यस्त क्षण में
उड़न अनुपाँखें

मन ललकता है लंच में साथ पाने को
बताओ क्या करूँ ?

मेज़,कुर्सी,अल्मिरा
या बॉस के निर्देश
इन तलक में
आ उतरतीं
कर सभी निश्शेष

मन ललकता है कहीं सँग भाग जाने को
बताओ क्या करूँ ?

यह प्रतीक्षा पंक्ति बस की
टिकट,चिल्लर,भीड़
हवा में मौजूद लय तुम
लिये स्वर में मीड़

मन ललकता है सड़क पर गीत गाने को
बताओ क्या करूँ ?

वासन्ती इच्छाएँ

नरम धूप से लेकर
मन तक हैं
फिर छाईं
वासन्ती इच्छाएँ
हरषाईं !

देह गुँथी मुद्राएँ
फिर लौटीं
फिर ताज़ा
होंठों के होंठों से सम्भाषण
पोर-पोर छुअनें
फिर प्रणयातुर
गर्म तेज़ साँसों के
साँसों पर फिर शासन

निपट शुष्क शाखें
फिर
रस से हैं भर आईं !
वासन्ती इच्छाएँ
हरषाईं !!

***

बी के वर्मा "शैदी"
राजेन्द्र नगर, गाजियाबाद-उत्तर प्रदेश , मो. 9871437552

दोहे

यह छोटा है, वह बड़ा, भ्रमित हो रहे लोग।
ताजमहल के हुस्न में, हर पत्थर का योग ।।

साथी हो यदि कष्ट में, मित्र दुखी दिन-रैन
तिनका दांतों में फंसे, जीभ रहे बेचैन।।

भली न होती ज्यादती, निर्बल के भी संग।
जूता काटे पांव में, यदि हो जाए तंग।।

रोटी में सब ने लिया, अपना अपना भाग।
तवा बने सहते रहे, हम चूल्हे की आग।।

जाने किस अनुपात में, दिया नियति ने दान।
आंसू के सागर मिले, अंजुरी-भर मुस्कान।।

"सांप औ सीढ़ी" खेल-सा, जीवन का व्यापार।
जिसमें कम हैं सीढियां, सांपों की भरमार।।

अंतर जीवन-मृत्यु का, कहता हूँ बेलाग।
यह चूल्हे की आंच है, वह मरघट की आग।।

बखिया-सा है प्रेम-पथ, जिसमें कष्ट अनेक।
सुई छेदती है तभी, दो हो पाते एक।।

वही पिया की चाह है, वही हिया की पीर।
चाहे तो मीरा कहें, या फरमाएं "मीर"।।

सोच भिन्न, पर, पुष्प का, लें मिल कर आनन्द।
तुमको रंग पसंद है, मुझको गंध पसंद।।

ऐसा तुमने क्या बुना, समझ न पाया मर्म।
स्वैटर मेरा ऊन से, कई गुना है गर्म।।

तुलसी पूजे कामिनी, शांत स्वभाव अनूप।
भक्तिकाल के भाव हैं, रीतिकाल का रूप।।

गोरी नर्म हथेलियां, उनमें जगमग दीप।
मोती को थामे हुए, खुली हुई ज्यों सीप।।

मान दे गई नेह को, तेरी पावन याद।
तुलसी के सम्पर्क में, ज्यों जल बने प्रसाद।।

छिपे पड़े भूगर्भ में, हीरा, पन्ना, लाल।
ज्यों पैसों की पोटली, बुढ़िया रखे संभाल।।

महानगर में अब कहाँ, वन-उपवन का साज?
प्रकृति सिमट कर रह गई, गमलों तक ही आज।।

वन सारे ईंधन हुए, नदियां पतली धार।
प्रकृति द्रौपदी बन गई, दुःशासन संसार।।

कल समझेंगे वे यही, कुदरत शायद मूक।
जो बच्चे जानें नहीं, क्या कोयल की कूक।।

इतरा-इतरा कर कहे, यों तुलसी से भांग।
मेरी है तुझसे अधिक, दुनिया-भर में मांग।।

साया वाले पेड़ हम, दें सबको विश्राम।
जब सूखेंगे, आएंगे तब ईंधन के काम।।

***

आशा शैली
नैनीताल-उत्तराखंड, मोबाइल 7055336168

ग़ज़ल

(1)

आज हुई कुछ ख़ुद से अनबन
घर बाहर अब क्या लगता मन

बेहद भारी साँसों के संग
डोलें हम चौबारे आँगन

जाने क्या होगा कब आगे
बढ़ती जाती दिल की धड़कन

चाँद हादसे ढक लेते हैं
खो जाता रातों का यौवन

याद हमें आते हैं अक्सर
साथ तुम्हारे बीते वो दिन

इस रस्ते से जो भी गुज़रे
प्यार उसे रखता है उन्मन

देखो शैली खो मत जाना
कदम कदम पर मिलती उलझन

***

(2)

जिसे पा के उससे जुदा रहो
कभी नाम उसका लिया करो

मुझे तुझ पे ऐन यकीन है
कभी अपने रब से कहा करो

हमें देखना है करम तेरा
मेरी माफ सारी ख़ता करो

मेरा शौक मेरा जुनून है
इसे यूं न मुझसे जुदा करो

ये वक़ार है मेरी ज़िन्दगी
दीवानगी न कहा करो

***

डॉ. सुरेन्द्र दत्त सेमल्टी
देहरादून - उत्तराखण्ड, मो. 9690450659

गीत

बसन्त

देखो बसन्त फिर से आया,
संग में बहुत कुछ है लाया!

दिनकर की गुनगुनी धूप,
मन को लुभाने वाला रूप!

सुवासित औ शीतल हवा,
लगती है तन-मन को दवा!

फूलों से झुक जाती डाल,
गुलाबी नीले पीले लाल।

मधुमक्खी पराग ले जाती,
बहुउपयोगी शहद बनाती।

भ्रमर गुन-गुन करते आते,
सुमन उनको खूब लुभाते!

रंग-बिरंगी तितली अनेक,
मन खुश होता उनको देख!

बच्चे उन्हें पकड़ने जाते,
फुर्रसे उड़ती पकड़ न पाते!
होली-बसंत का नाता गहरा,
रंगों से रंगता सबका चेहरा!

लहलहाती खेतों में फसलें,
गेंहू-जौ-सरसों कई नशलें।

सजती दुल्हन जैसे धरती,
हर प्राणी के मनको हरती!

धीरे - धीरे ठण्डक जाती,
मनको लुभाती गर्मी आती।

***

शिवानंद सिंह 'सहयोगी'
मेरठ-250001, उ.प्र.
संपर्क- 9412212255

नवगीत

नागफनी का नगला

घीसू-बुधिया वैसे ही हैं
सीधे-सादे सच्चे |

प्रेमचन्द के पग के जूते
अभी आजतक फटहे,
दरवाजे पर बैठ रहे हैं,
आकर पाले गदहे,
मधुमक्खी-छत्ते पर पत्थर,
मार रहे हैं बच्चे |

साठ साल के ऊपर वाला,
नहीं मिला वह पगला,
लगा बहुत पिछड़ा है, बिछड़ा
नागफनी का नगला,
सड़कें ऊबड़-खाबड़ टेढ़ीं,
सब के सब घर कच्चे |

दाता दीन अभी जीवित है,
भगत नहीं है बदला,
चड्ढा अब भी चड्ढा ही है,
पहने है वह झबला,
पोषाहार नहीं पाते हैं,
बूढ़े जच्चा-बच्चे |

मैं अभी भी गाँव में ही हूँ

शहर में तो हूँ,
किंतु मुझमें पूर्वजों की अस्मिता का,
आनुवंशिक गाँव कोई बस रहा है,
मैं अभी भी गाँव में ही हूँ।

खेतियों की लहलहाहट,
पंछियों का चहचहाना,
क्यारियों में केवड़ों की
मुसकराहट, गहगहाना,
शहर में तो हूँ,
किंतु मुझमें लोककाव्यों की गली के,
बरगदों का ठाँव कोई बस रहा है,
मैं अभी भी गाँव में ही हूँ।

नदी के तीरे खड़े उन,
कटहलों की राजधानी,
व्यक्तिवाचक संधियों की,
लोकरंजक तिरमुहानी,
शहर में तो हूँ,
किंतु मुझमें आचरित अभिव्यक्तियों का,
आत्म-गौरव पाँव कोई बस रहा है,
मैं अभी भी गाँव में ही हूँ।

हर शहर की रौशनी ही,
छल रही है आमजन को,
अति अधिक प्यासे रहे उस,
आत्म निर्भर क्लांत मन को,
शहर में तो हूँ,
किंतु मुझमें किस तरह पीछा छुड़ाऊँ,
बहुत दिन से दाँव कोई बस रहा है,
मैं अभी भी गाँव में ही हूँ।

***

रमेश कुमार भदौरिया "सत्यमन"
गाजियाबाद -उत्तर प्रदेश, मो. 8826192810

गीत

जीवनधारा अविरल बहती

जीवनधारा अविरल बहती।
नित नित नई कहानी कहती।

पल अगला अज्ञात सदा ही।
मिले अपेक्षित यदा-कदा ही।
स्थिर नहीं जगत में कुछ भी,
सुखद घड़ी या फिर विपदा ही।
पल पल रूप बदलती रहती।
जीवनधारा अविरल बहती।

पशु-पक्षी,पर्वत, सागर ,वन।
सब पर चाहे मनुज नियंत्रण।
जीव-जगत जिस पर निर्भर हैं;
उसी प्रकृति का करता शोषण।
नियति सबक सिखलाती रहती।
जीवनधारा अविरल बहती।

बचपन यौवन याकि जरठपन।
जर्जर तन,फिर नूतन जीवन।
जीवन पथ के दृश्य मात्र हैं ;
सतत प्रवाहित है चिर चेतन।
सुख-दुख के हिचकोले सहती।
जीवनधारा अविरल बहती।
नित नित नई कहानी कहती।

कहते ज्ञानी-जन ,धर्मात्मा ।
जीव-जगत कण-कण परमात्मा।
पंचभूतमय तन तो नश्वर ;
अजर अमर अक्षय है आत्मा।
कटती न मिटती न गलती न दहती।

जीवनधारा अविरल बहती।
नित नित नई कहानी कहती।

***

डॉ. ज्ञानेश दत्त शर्मा 'हरित'
गाजियाबाद-उत्तर प्रदेश मो. 9837280720

मुक्तक

(1)
तम में डूबा घर, उजाला मिल सके कुछ कीजिए।
टूटते मन को शिवाला मिल सके, कुछ कीजिए।
भूख से बेचैन हो चिल्ला रहा बचपन जहां
उसको रोटी का निवाला मिल सके, कुछ कीजिए।

(2)
अमर सत्य को मिटा न पाया कोई परिवर्तन है।
बचपन,यौवन रूप, बुढ़ापा सब तन की उतरन है।
कोई बन्धन रोक न पाया,बढ़ते प्रेम चरण को
जो जग को कुछ देकर जाता, वही अमर जीवन है।

(3)
गुनगुनाती हवा जाने क्या कह गयी
गंध गुज़रे ज़माने की मन भर गयी
तन से मन ने कहा थोड़ा संयम रखो
बूंद फिर भी नयन को सजल कर गरी।

(4)
स्वप्न मृगजल सा मन को छलता रहा
ज्वार से प्राण सागर मचलता रहा
याद आती रही,उम्र जाती रही
व्याकरण वक्त का भी बदलता रहा।।

(5)
सूखे अधरों से हम गीत गाते रहे
दूर तक तुम न थे, पर बुलाते रहे
आंसू गिरते रहे,,डोला उठ ही गया
बाबरे से हम बने, मुस्कराते रहे।

इन्द्रदेव भारती
नजीबाबाद-बिजनौर-उ. प्र. मोबाइल 9927401111

गीत

स्वागत है रितुराज !

हे....अभ्यागत !
है शुभ-स्वागत!
स्वस्तिमयी..रितुराज ।
स्वागत है.....!
रितुराज बसंता!
स्वागत है रितुराज ।।

(१)

शुष्क धरा पर,
झोली भरकर,
हरीतिमा....बिखराई ।
तोरण...द्वारों,
वंदन.....वारों,
से..अवनी...सजवाई ।
श्री - वंदन को,
अभिनंदन को,
भावनाओं के ताज ।।
स्वागत है.....!
रितुराज बसंता!
स्वागत है रितुराज ।।

(२)

सरसों चहके,
टेसू.....दहके,
वन-उपवन हैं बहके ।
वृक्ष - पात के,
तना, शाख के,
कली-पुष्प सब महके ।
सकल प्रकृति,
ठुमकी ठुमकी,
नाच रही है आज ।।
स्वागत है.....!
रितुराज बसंता!
स्वागत है रितुराज ।।

(३)

पवन - गंध में,
अंग - अंग में,
राग - रंग...मदमाया ।
पोर - पोर में,
रोम - रोम में,
नव-हुलास हुलसाया ।
उर-उमंग का,
तन-तरंग का,
मानव-मन पर राज ।।
स्वागत है.....!
रितुराज बसंता!
स्वागत है रितुराज ।।

***

प्रगीत कुँअर
सिडनी—ऑस्ट्रेलिया

ग़ज़ल

भले अंदर हों बाहर से कोई काला नहीं मिलता
तभी हर जाँच में कोई भी घोटाला नहीं मिलता

जहाँ ताज़ा हवा थी अब उसी खिड़की पे एसी है
दिये को भी तो अब दीवार में आला नहीं मिलता

कहाँ है खेल की वो भावना पहली सी लोगों में
सभी को जीतना है हारने वाला नहीं मिलता

कभी मुश्किल के तालों की सही चाबी नहीं मिलती
कभी चाबी हैं तो उसका सही ताला नहीं मिलता

हम उसके हर किसी कोने में अक्सर रोज़ जाते हैं
तभी यादों के कमरे में कोई जाला नहीं मिलता

हमारे पाँव छलनी हो चुके हैं राह पर चल कर
मगर उनको हमारे पाँव में छाला नहीं मिलता

***

डॉ० भावना कुँअर
सिडनी-ऑस्ट्रेलिया

ग़ज़ल

वो जब से आएँ हैं मेरे घर में, ये घर का आँगन महक रहा है
ज्यूँ मन की डाली पे बैठ पंछी कोई सुरीला चहक़ रहा है

अभी तो पतझर ने मुँह था फेरा अभी-अभी थी बहार आयी
कली खिलीं हैं जो गुलशनों में तो क्यूँ ये भँवरा बहक रहा है

ये कैसी दुःख की घड़ी है आयी सुखों का आँचल सरक रहा है
बिछड़ गया है कोई जो हमसे, विरह का पंछी सिसक रहा है

ये किसने उसकी लिखी है किस्मत किया ही उसने गुनाह क्या है
बनाके ऊँची इमारतें वो, क्यूँ ख़ुद ही दर-दर भटक रहा है

शहर का जादू चढ़ा है जब से हुए हैं सारे ही गाँव ख़ाली
हुई वहाँ पर है भीड़ इतनी शहर ही सारा दरक रहा है

अभी तो सूरज ढला नहीं है अभी सुहानी है शाम बाक़ी
बस एक तारा मगर अकेला, खुले फलक पर चमक रहा है

समझ ना पाया मेरी मुहब्बत ग़ुरूर में था वो शख़्स इतना
वही ढूँढता हमें रात-दिन गली-गली अब भटक रहा है

***

सत्यवती मौर्य
मुंबई, मोबाइल : 9967812060

गीत

हाँ वसन्त ऋतु आई है

हाँ वसन्त ऋतु आई है,हाँ वसन्त ऋतु आई है।
कानन -आँगन के वृक्षों ने तज के अपने पीत वसन,
नव पल्लव की कर दी जैसे जग में मुँह दिखाई है।
कलियों पर मंडराते भौरों ने कानों में उनके,
चुपके से फूल बनने की कोई जुगत बताई है।
हाँ वसन्त ऋतु आई है

मनसिज ने दसों दिशाओं में साध किये हैं शर सन्धान,
शिव के मन भी पार्वती की प्रेम अगन जलाई है।
सरसों खेतों में फूली ,सूरजमुखी की इत-उत डोले,
अमराई से होकर आती मदमाती पुरवाई है।
हाँ वसन्त ऋतु आई है

धरती का धानी आँचल मखमल- सा लहराया है,
दहका पलाश ,महका महुआ,मंजरियों की गमक पवन संग आई है।
अंगड़ाई मौसम ने ली और रात छिटकी जुन्हाई है,
धरती -अम्बर पर मानो बस वसन्त ऋतु मुस्काई है।
हाँ वसन्त ऋतु आई है

मोहित हूँ सिरजनहार तुम्हारे इस अद्भुत संसार में,
क़लम किसी की ने भी कहाँ थाह तेरी पाई है।
ऋतुओं का हाथ थामे द्वार आया नवल वर्ष,
फगुआ और चैती की थाप ढोलक पर छाई है।
हाँ वसन्त ऋतु आई है

***

मृत्युंजय साधक
गोविंदपुरम, गाजियाबाद मोबाइल...9891375604

ग़ज़ल

(1)

है दिल की बात तुझसे मगर खोल रहा हूँ
मैं चुप्पियों में आज बहुत बोल रहा हूँ

सांसों में मुझे तुझसे जो एक रोज मिली थीं
वो खुश्बूयें हवाओं में अब घोल रहा हूँ

अब तेरी हिचकियों ने भी ये बात कही है
मैं तेरी याद साथ लिये डोल रहा हूँ

सोने की और न चांदी की मैं बात करुंगा
मैं दिल ही की तराजू पे दिल तोल रहा हूँ

चाहो तो मुहब्बत से मुझे मुफ्त ही ले लो
वैसे तो शुरु से ही मैं अनमोल रहा हूँ

(2)

इक खुशी भी कहाँ सलामत हैं
जिंदगी मौत की अमानत है

प्यार की राह में लुटेरे हैं
रहजनी में कहाँ शराफत है

द्वार पर शूल जब लगे उगने
कर रही हर कली बगावत है

जिंदगी है कटी, कटी मेरी
कोई शिकवा न कुछ शिकायत है

तुम रहे हो सदा बहारों में
दर्द की भी गली में स्वागत है

रास्ता जो मिला कठिन मुझको
साथ में तुम मिले तो राहत है

हर तरफ जो उठे नई मुश्किल
जीत लो तुम उसे इजाजत है

प्यार के लफ्ज को पढ़ो ये भी
पाक गीता कुरान आयत है

तेरी नजर से है नजर बांधी
कर रही वो तेरी हिफाजत है

प्यार का खत लगा लिया माथे
सोचकर ये कि ये इबादत है

दिल कभी तुमने भी दुखाया था
भूल जाने की मेरी आदत है

रोशनी से पुरानी यारी थी
अब तो साधक वहाँ अदावत है

***

डॉ. अंजु सुमन साधक
गोविंदपुरम, गाजियाबाद-उत्तर प्रदेश, मो. 8368886088

एक गीत....

कभी तो देखिए

भावना से भीगता है मन कभी तो देखिए।
जिंदगी से छूटती धड़कन कभी तो देखिए।।

हैं नवाते शीश जाकर मंदिरों में तो सभी
देखते पर हैं नहीं माता-पिता तक को कभी
क्षीण- जर्जर हो रहा जो तन कभी तो देखिए।
जिंदगी से छूटती धड़कन कभी तो देखिए ।।

एक सिक्का भी मिले तो जो खजाना- सा लगे
सागरों के सीप का मोती सुहाना-सा लगे
वो पसीने से कमाया धन कभी तो देखिए ।
भावना से भीगता है मन कभी तो देखिए ।।

नाम पर अब प्रीति के, केवल छलावा रह गया
एक आँधी जो चली ,सारा महल ही ढह गया
प्रीति के पथ पर मिली तड़पन कभी तो देखिए ।
जिंदगी से छूटती धड़कन कभी तो देखिए ।।
भावना से भीगता है मन कभी तो देखिए ।।

***

एम. एम. खान:
कोटा (राजस्थान) , मो. 9414569391

ग़ज़ल

पत्थर कोई और कोई चट्टान लगे
रूह से खाली ही अब इंसान लगे

धूप छांव हो, गम या खुशियों का मौसम
आते जाते जैसे ये मेहमान लगे

साहिल से मिलने की बेताबी पाले
मौजों के दिल में कोई तूफान लगे

तन्हाई से अक्सर बातें करता है
कोई पुरानी उससे भी पहचान लगे

तितली आई और आकर लौट गई
कागज के फूलों के जो गुलदान लगे

गांव में अर्से के बाद हुवा आना
जाने पहचाने चेहरे अंजान लगे

हिम्मत और मजबूत इरादे लेकर चल
दूर कठिन मंजिल भी फिर आसान लगे

हर जालिम से टकराता है ये नादां
मुझको तो इसका पुख्ता ईमान लगे

कितने दर्द समेट के जीता है मुस्लिम
सीना इसका जलता आतिशदान लगे

***

डॉ. स्वप्ना उप्रेती
सिकन्दराबाद, बुलन्दशहर –उत्तर प्रदेश, मो. 7500482522

हाइकु

बेटी

1

पंख खोलेंगी
आकाश में उड़ेंगी
मेरी बेटियाँ

2

बेटी से माँ का
सफ़र, बेफिक्री से
फ़िक्र का सफ़र

3

अपना दर्द
छुपाकर, हँसती
ये लड़कियाँ

4

बिटिया मेरी
पराया धन नहीं
ख़ज़ाना मेरा

5

लक्ष्मी सी आई
खुशियाँ बरसाई
मेरी बेटी ने

6

पथ भटकी
मेरी प्यारी बिटिया
जुगनूँ ढूंढे

7

बिटिया चली
वो मीठी यादें छोड़
पिया के घर

8

अजन्मी बेटी
माँ से करे सवाल
क्यूँ ना आऊँ मैं ?

9

आती रहना
जल्दी आना बिटिया
याद करे माँ

10

कौन कहता
दो दिल नहीं होते
बेटी से पूछो

11

फूल सी खिली
माता के अंगना में
नाज़ों से पली

डॉ बिन्दु कर्णवाल
गाजियाबाद – उत्तर प्रदेश, मो. 9810646945

कविता

एक सोच!

कहने को तो बहुत कुछ है पर सुनाऊं किसको?
कौन होगा जो सुनेगा कि मुझे हंसना अच्छा लगता है?
कौन सुनना चाहेगा कि मुझे मनमर्जी भाती है?
किसको बताऊं कि मैं चुप रहना चाहती हूं?
किसको सुनाऊं कि मैं उनसे बेज़ार आ चुकी हूं?

कैसे कहूँ मैं किसी से कि मुझे
उनकी बातें अच्छी नहीं लगती?
क्या यह सही है कि मैं कुछ बोलूं?
क्या यह उचित होगा कि मैं किसी की ना सुनूं?
क्योंकि सुन-सुन के मैं थक चुकी हूँ।

क्या यह सही होगा कि मैं उनसे कहूँ
कि मैं अकेले सोचना चाहती हूं?
कौन सुनेगा? शायद कोई नहीं!
कोई क्यों मुझे सुनना चाहेगा?
क्यों मुझे मुक्त करना चाहेगा?
कोई क्यों मुझे अकेला छोड़ेगा?
कोई क्यों मुझे मनमर्जी करने देगा?

मैं बहुत उपयोगी हूँ!
उन्हें मेरी जरूरत है !
मैं उनकी जरूरत हूँ!
मुझे तन्हा नहीं रहना चाहिए।
सुनाना तो बिल्कुल नहीं।
मुझे सिर्फ सुनना ही चाहिए।
यही उचित है

ऐसे ही चलती आई है
ऐसे ही चलती रही है ये
ऐसे ही चल सकती है ये दुनिया।
इसलिए यही उचित है कि
मै चुप रहूँऔर सिर्फ सुनूँ।

***

ऋषभ शुक्ला
शाहजहाँपुर-उत्तर प्रदेश , मो. 8299455767

कविता

पूर्ण विराम

ये चाँद
कितना अलग है इंसान से
मौन रहता है स्वयं
लेकिन बंधाता है ढाँढस
जागता है पूरी रात
मेरे साथ
जानना चाहता है
मेरे कष्टों का उद्गम
जिसे शीतल कर दे
अपनी चाँदनी से
कि फिर न दहक सके वहाँ
भावनाओं का कोई ज्वालामुखी
तो होगा वो तुम्हारे लिए चाँद
मेरे लिए तो है
रात्रि की अकेली यात्रा में
मेरा सहयात्री
जो गिनता है मेरे साथ
जीवन पथ में
हर मील के पत्थर को
इस आशा में कि
शायद मिले वो पत्थर
जिस पर लिखा हो
"पूर्ण विराम"
***

अलका मैथिल
आगरा-उत्तर प्रदेश, मो. 9457510609

ग़ज़ल

यूं ही भटकते रहे

यूं ही भटकते रहे हम दर बदर ठोकरें खाकर
किस्मत कभी तो आएगी मेरी हमदर्द बनकर

झटक दिया हाथ उसने मुझसे ये कहकर
नहीं पनाह मिल सकती तुझको किसी दर पर

कैसे हम समझाएँ अपने दिल को बंधुवर
ये छोड़ता नहीं किसी दामन को पकड़ कर

झल्लाता है बार-बार जीवन यूं मुझ पर
जैसे वह पछता रहा हो मुझसे मिलकर

आस लगाए बैठे हैं यूं इंतजार में
गुजरेगा इसी राह से इक दिन मेरा रहबर

बार बार गिर जाता हूं मैं ठोकरें खाकर
शायद तू ही संभालेगा मुझको कभी आकर

***

डॉ.ब्रजराज ब्रजेश
गुलावठी-बुलंदशहर-उत्तर प्रदेश, मो. 8923148526

कविता

फटी बाँह वाला कुर्ता

दबे हुए गाँव की खुदाई में
बरामद हुआ है एक घर
टपकती छत और
सूनी सी देहरी
जंग लगा हुआ तवा
टूटा हुआ चूल्हा
खाली पड़ी हुई चक्की में
चूड़ी का एक टुकड़ा
धुएँ में काले पड़े
खूंटियाँ और आले
गहरी प्यास लिए
मिट्टी का घड़ा
खामोशियां ओढें
अलगनी की डोरियां
उदासी में डूबी
कांच की गोलियां
और फटी बाँह वाला
एक कुर्ता
जिसकी तुरपाइयों वाली
खाली सी जेब में
आ गए हैं कुछ तिनके
न जाने कहां से
हवाओं के संग उड़कर
फैल गए हैं दूर तक
फिर से बुन रहे हैं ख्वाब
धूप की छाया में देर तक

***

मुकेश कुमार 'निर्विकार'
बुलंदशहर-उत्तर प्रदेश, मो. 9411806433

कविता

शब्द-संबल

डूबते को तिनका ही सहारा नहीं देता
शब्द भी संबल देते हैं
लहरों से जूझने का, लहरों को चीरने का

एक भयावह समुद्र है
इंसान के अंदर
हाहाकार करता
हमें डुबोने को तत्पर
अपने आगोश में लेता हुआ

जब-जब डूबने को होते हैं हम
तब-तब किसी अपने की शब्द-संजीवनी मिले सुनने को
"हिम्मत रखना...धीरज धरना...ये दिन भी नहीं रहेंगे सदा
दुर्दिन के....हम हैं न....कोई भी समस्या हो तो
बेझिझक बताना...आखिर हम कोई ग़ैर थोड़े ही हैं!"

कितना संबल देते हैं ये शब्द
सचमुच, डूबने नहीं देते किसी इंसान को
डूबने से बचा लेते हैं हर बार
और मैं अपने अंतस के महासागर से
सुरक्षित निकल आता हूं

***

डॉ. ईश्वर सिंह - संपादक - शुभोदय

साहित्यिक हलचल

प्रो. महावीर सरन जैन का शोध व्याख्यान

'शुभोदय' के सम्मानित संरक्षक एवं अन्तरराष्ट्रीय भाषाविज्ञानी प्रोफेसर महावीर सरन जैन ने 'लिंगविस्टिक सोसाइटी आफ इंडिया,पुणे' द्वारा आयोजित 44वीं अन्तरराष्ट्रीय संगोष्ठी (24-26 नवंबर 2022) में मुख्य वक्ता के रूप में "प्राकृत और अपभ्रंश भाषाओं का आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं पर प्रभाव" विषय पर उत्कृष्ट और मार्गदर्शक शोध-लेख प्रस्तुत किया गया। लगभग 400 अन्तरराष्ट्रीय विषय विशेषज्ञ प्रतिनिधियों द्वारा प्रोफेसर जैन की स्थापनाओं को सराहा गया। इस महत्वपूर्ण शोध -पत्र का सारांश 'शुभोदय ' के 'साहित्यिक हलचल' स्तम्भ में प्रस्तुत करते हुए हम गौरवांवित अनुभव कर रहे हैं।

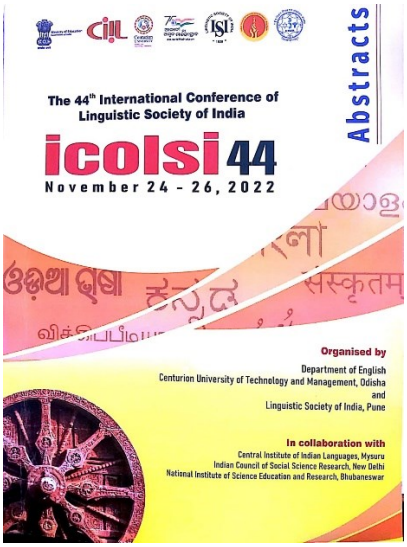

Plenary-VII

THE INFLUENCES OF THE PRAKRIT AND APABHRANSHA LANGUAGES ON THE MODERN INDO-ARYAN LANGUAGES

Prof. Mahavir Saran Jain
Former Director, Kendriya Hindi Sansthan, India

The article 1 presents a study on the development of the modern Indo Aryan languages from the 'Prakrit' and 'Apabhransha' languages. This article contradicts the erroneous opinion that the modern Indo-Aryan languages have originated from the Sanskrit language. Upto now, the different literary-linguistic forms of the 'Prarkrit' and 'Apabhransha' have been considered as different languages. The author establishes the opinion that they are not different languages. The different forms of 'prakritas' are the forms of a Standard; functional or literary language and the same position is of 'Apabhransha'.

The different forms of the modern Indo-Aryan languages 3 developed from the various linguistic forms of the 'Prakrita' and 'Apabhransha' languages during the 10 th to 12 th centuries A.D. It is a fact that, to a certain extent, the scientific study of the succession of this development is not possible.

However, efforts have been made from 'unknown to known' in most of the cases. In this regard, one has to consider that only through the scientific method of approaching from 'known to unknown' can the 'unknown-forms' be reconstituted and on the basis of 'reconstruction' one can achieve, to a certain limit, the scientific study of the development from 'Prakrit' and 'Apabhransha' to the modern Indo-Aryan languages. It is an extremely difficult problem to collect all the links pertaining to the development of the modern Indo-Aryan languages, based on the known material of the 'Prakrit' and 'Apabhransha' languages.

(Volume-2, issue-1)

डॉ अंजू दुबे
बुलंदशहर-उत्तर प्रदेश, मो. 9456071559

सूरदास और सूरसागर की भाव योजना

- प्रो. महावीर सरन जैन की दृष्टि में

सूरदास भक्ति काल के कृष्ण भक्ति धारा के प्रतिनिधि कवि थे। सोलह कलायुक्त पूर्ण अवतारी कृष्ण की बहुरंगी दिशाओं के गायन से उन्हें अतुलित प्रसिद्धि प्राप्त हुई। समूचे रीतिकाल ने उन्हीं से विरासत में कृष्ण की प्रेमा भक्ति प्राप्त की। परवर्ती समय में सूर, साहित्यनुरागियों के साथ ही सहित्यलोचकों के मध्य भी समान रूप से लोकप्रिय रहे।

सूर काव्य के माधुर्य और वैविध्य के आकर्षण से प्रसिद्ध भाषाविद प्रोफेसर महावीर सरन जैन असंपृक्त न रह सके और भाषा की गति पर सहज पकड़ रखते-रखते सूर की भाव योजना के रत्नाकर में गहरे पैठ गए। अपनी पुस्तक 'सूरदास और सूरसागर की भाव योजना' में उनकी परिकलित वैज्ञानिक दृष्टि दिखाई पड़ती है। जैसा की नाम से ही स्पष्ट है 4 अध्यायों में विभाजित इस पुस्तक में पहला अध्याय सूरदास पर है और शेष 3 अध्याय क्रमशः वात्सल्य, श्रृंगार और अध्यात्म के तत्व वर्णन को समर्पित हैं।

महाकवि सूरदास का जीवन परिचय देते समय लेखक सूरदास के पदों में विद्यमान अंतस्साक्ष्यों व अन्यत्र प्राप्त बहिस्साक्ष्यों के आधार पर ही किसी निर्णय पर पहुंचते हैं। प्रो. जैन सूरदास का समय निर्धारित करने में साहित्य लहरी के एक पद को आधार बनाते हैं जिसमें रचनाकाल का संकेत संवत 1617 मिलता है। लेखक विभिन्न विश्लेषण के आधार पर साहित्य लहरी के रचना काल के चार अनुमान संवत 1607, 1617, 1627 तथा 1677 बताकर बिना निष्कर्ष के आगे बढ़ जाते हैं। नाम, जन्म, स्थान तथा अंचल का परिचय देने के लिए भी साहित्य लहरी के अन्य पदों का आश्रय लिया जाता है किंतु निर्णय नदारद है।

सूरसागर के विभिन्न पदों में सूरदास स्वयं को नंद के द्वार का 'ढ़ाडी' बताते हैं जिससे डॉ. बृजेश शर्मा अपनी पुस्तक 'सूरदास' में उन्हें ब्राह्मणेतर सिद्ध करते हैं किंतु अनेक प्रसंगों से यहां सूर का विनियातिरेक ही प्रधान प्रतीत होता है। सूरदास का परिचय देने के लिए, लेखक प्रोफेसर जैन प्रत्येक उपलब्ध स्रोत की पड़ताल करते हैं जो उनके विस्तृत अध्ययन का परिणाम है। उन्होंने 'चौरासी वैष्णवन की वार्ता' 'निज वार्ता' 'भाव प्रकाश' 'श्री बल्लभ दिग्विजय' 'भक्तमाल' 'भक्तमाल की टीका' आदि ग्रंथों से प्राप्त सूत्रों से स्पष्ट किया है कि सूरदास का स्वीकार्य नाम सूर अथवा सूरदास था, जन्मतिथि संवत 1535 वैशाख शुक्ल पंचमी तिथि थी, जन्म स्थान सीही था, जाति से ब्राह्मण थे, जन्मांध थे तथा उनका निधन संवत 1628 से 1640 के मध्य हुआ। रचनाओं के विषय में कहा गया है कि उनकी तीन प्रमाणित रचनाएं थी। सूरसागर, साहित्य लहरी और सूर सारावली।

द्वितीय अध्याय में लेखक की दृष्टि उस परमानंद लोक में निबंध हो गई जिसके कोने-कोने में सूर अपनी बंद आंखों से झांकते थे। लेखक वात्सल्य के भावलोक में जननी और जातक की स्थिति को अलग-अलग कर विष्लेषित करते हैं। वात्सल्य के कारण माता देवकी कृष्ण के जन्म पर अतिशय चिंतित है और वासुदेव से कहती है:

बुध, बल, छल, कल कैसेहुं करके

काढि अनतहिं दीजै

जब कृष्ण यशोदा की गोद में पहुंच जाते हैं तब उनकी बाल लीलाएं और वात्सल्य की उत्पत्ति होती है। प्रो.महावीर सरन आनंद के सागर सूरसागर से वात्सल्य के क्रमिक विकास के कारणों का रसमय वर्णन किया है। यशोदा बढ़इया से पालना बनवाती है, जो कनक रत्न मणि से निर्मित है, उसमें कृष्ण को झुलाती है, लहराती है और मल्हार गाती है तथा अपने लाल के शीघ्र बड़े होने की कामना करती है। बुरी नजर से बचाने के लिए 'भ्रू' पर मसि बिंदा लगाती है, राई-लोन उतारती है, अनिष्ट की आशंका से दूर जाने से मना करती है। बालक कृष्ण के मथुरा चले जाने पर भी यशोदा कृष्ण की चिंता करती है।

अध्याय 2 के उत्तरार्ध में कृष्ण की बाल लीलाओं का वर्णन है। यहां उन्होंने बच्चों का शारीरिक क्रियात्मक विकास, बोलने में परिपक्वता, कथा सुनाने की जिज्ञासाख्, मिट्टी खाने के, चिढ़ाने के, शैतानी के समस्त प्रमुख दृश्य उपस्थित किए हैं।

पुस्तक के तृतीय अध्याय का विषय है प्रेम एवं काम विषयक भाव योजना। आचार्य नंद दुलारे बाजपेई मानते हैं कि 'सूर काव्य में अलौकिक रस है तथा रस की निष्पत्ति से प्राप्त परमानंद भी अलौकिक है।' महावीर सरन जी उपर्युक्त कथन से सहमत होते हुए भी 'अलौकिक प्रेम अनुभूतियों का विवेचन यथार्थ सांसारिक अनुभव के आधार पर करने की इच्छा' रखते हैं। लेखक ने साहित्य के श्रृंगार को काम का पर्याय नहीं वरन काम का परिष्कार माना है, जहां संयोग से अधिक वियोग ही प्रेम की तीव्रता, विविधता एवं उदात्तता का हेतुक है। श्रृंगार का रस राजत्व हिंदी साहित्य में सर्वोच्च आसन पर सूर काव्य में ही अभिशिप्त हुआ है। एक और गोपियां हैं तो दूसरी और राधा। ये सभी कृष्णमय, अंदर भी कृष्ण, बाहर भी कृष्ण। परकीया भाव स्वकीया भाव में बदल जाता है तथा काम के उच्चतम स्तर पर पुरुष स्त्री का भी भेद समाप्त हो जाता है। राधा ही माधव, माधव ही राधा। प्रोफ़ेसर जैन के अनुसार सूर के कृष्ण एवं राधा की प्रेम कथा आध्यात्मिक धरातल पर प्रत्यभिज्ञा दर्शन के शिव एवं शक्ति त्रिपुर दर्शन के कामेश्वर एवं कामेश्वरी तथा सांख्य दर्शन के आदि पुरुष एवं आदि प्रकृति के समानांतर सम्मिलन भूमिका पर अखंड ब्रह्म रूप में प्रतिष्ठित होने की कथा हो और मनोवैज्ञानिक धरातल पर पुरुष एवं नारी के तन एवं मन के मिलकर पूर्ण होने की कामकला भी हो। प्रो. जैन डॉ रमाकांत तिवारी के इस कथन की अनेक उदाहरणों से पुष्टि करते हैं कि "सूर को इस बात में आनंद मिलता है कि राधा और कृष्ण एक साथ रहकर एक दूसरों को देखें और रीझें। वास्तव में सूरसागर के प्रेमलोक में सौंदर्य ही सर्व प्रधान आकर्षण है।"

लेखक ने गोपिकाओं की विरह वेदना, भ्रमरगीत प्रसंग का करुणाद्र चित्रण करने के साथ ही राधा की पीड़ा को भी उकेरा है। संयोग की चपला राधिका, बिरह में संयत दिखती है। वह न तो कृष्ण पर दोषारोपण करती है, न उपालंभ देती है और न ही उद्धव के तर्कों को काटती है। इस प्रकार बिरहणि नारी के रूप में भी राधा ने एक आदर्श उपस्थित किया है।

सूरदास एवं सूरसागर की भाव योजना के चतुर्थ व अंतिम अध्याय में लेखक ने सूरसागर के आध्यात्मिक स्तर को विवेचना का विषय बनाया है। उनके अनुसार राधा और कृष्ण की लीलाएं एक युवक व तरुणी के रूप में होते हुए भी तत्वत: कृष्ण गोलोक के परब्रह्म पुरुषोत्तम, घट-घट में व्यापक अंतर्यामी, अज, अनंत, अद्वैत, परमानंद रूप है तथा राधा भगवान पुरुषोत्तम की अंतरंग एवं अभिन्न स्वरूपा जगत उत्पादक शक्ति है। प्रस्तुत अध्याय में अब तक के दोनों अध्याय हो अर्थात वात्सल्य और श्रृंगार के लीला पदों के आध्यात्मिक अर्थ व्यंजित हुए हैं।

सूरदास ने कृष्ण काव्य में अपना इहलोक व परलोक दोनों साधे हैं। जीवन के यथार्थ धरातल पर सामान्य के चित्रण में कुशल चितेरे (सूरदास) ने इतने आयाम विस्तृत कर दिए हैं कि सर्वत्र अलौकिक रहस्यानुभूति होती रहती है एवं विस्मय का बोध बना रहता है। यह सूरदास का महात्म्य ही है कि भाषाओं की गहन विधियों में घूमता भाषा विज्ञानी भावों के सागर में अवगाहन का लोभ संवरण नहीं कर सका।

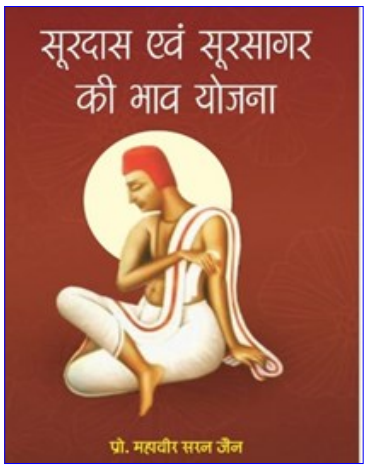

पुस्तक: सूरदास एवं सूरसागर की भाव योजना
लेखक: प्रोफेसर महावीर सरन जैन
आईएसबीएन: 978-81-948545-0-0
प्रथम संस्करण : 2022
प्रकाशक: समन्वय प्रकाशन, कवि नगर, गाजियाबाद-उ.प्र

। ***

डॉ. रमाकांत शर्मा
बुलंदशहर-उत्तर प्रदेश, मो. 9414410367

हत्यारी सदी में जीवन खोजती मुकेश निर्विकार की कविताएँ

यह बताना दिलचस्प होगा कि मैंने जब मुकेश निर्विकार का कविता - संग्रह ' हत्यारी सदी में जीवन की खोज ' को पहली बार पढ़ने के लिए हाथ में उठाया तब तक मेरा इस युवा कवि से चलताऊ क़िस्म का ही परिचय था । जहाँ तक मुझे याद है, इसके पूर्व इनकी दो - तीन कविताएँ पत्र - पत्रिका में और एक-आध कविता फेसबुक के ज़रिए पढ़ी थी।

यहाँ यह कहना मुझे ज़रूरी लगता है कि फेसबुक पर पढ़ी कविता ने मुझे गहराई तक प्रभावित किया। कविता का शीर्षक था,'ईमान का कछुआ'। इस कविता में कवि मुकेश निर्विकार लिखते हैं :

ईमान का कछुआ
पहुँचा, बेशक
सबसे बाद में
लेकिन
सिर्फ़ एक वही है
जो जान सका
मंज़िल का तमाम रास्ता
और रास्ते की ऊँच - नीच भी।

बेशक़ खरगोश रेस जीत चुका है। लेकिन वह अपने पदचिह्न छोड़ने में नाक़ामयाब रहा, जबकि कछुआ रेस हारकर भी अनेक प्रकार के अनुभवों से समृद्ध हुआ। बहुत कुछ नया सीखा और अपने पदचिह्न की अविरल लकीर भी बना सका।

वैसे तो यह खरगोश और कछुए की कहानी का काव्यमय निरूपण है ,लेकिन मेरे तईं युवा कवि निर्विकार की धैर्यवान, किंतु अनुभव-समृद्ध रचनाप्रक्रिया का सहज उद्घाटन भी है।

निश्चय ही 'हत्यारी सदी में जीवन की खोज' संग्रह की कविताएँ कवि के धैर्य, लगन और निष्ठा की परिचायक हैं ।

प्रस्तुत कविता- संग्रह की परिपक्व कविताओं को पढ़ कर ऐसा लगता ही नहीं कि यह कवि का पहला कविता - संग्रह है। मेरी बात की पुष्टि के लिये संग्रह की शीर्षक कविता को लिया जा सकता है। कवि निर्विकार हत्यारी सदी को संबोधित करते हुए कहते हैं :

वह सौंप रही है मनुष्य को
ज़िन्दगी और मौत के साजो - सामान एक साथ
रोती किलकारी को
किसी हास्य में नहीं बदल पा रही है
हमारी सदी

कवि का यह भी कहना है कि :

'निराशा और नरक के गर्त में
और ज़िंदा लोगों के बीच से/
ज़िन्दगी कभी की गुम हो चुकी है।
----ये सभी लोग उसी की खोज में द
दौड़ रहे हैं बेतहाशा। '

कवि निर्विकार के सोच की ख़ूबी यह है कि इतने निराशा और अवसाद के घने अँधेरे के बीच वर्तमान सदी जीवन जीने की आशा किसी भी सूरत में नहीं छोड़ती , क्यों कि उसे मालूम है कि जीवन- यात्रा में वापसी नहीं होती ।

एक बात और, इस कविता-संग्रह में व्यक्त हुई प्रश्नाकुलता हमें प्रभावित किये बिना नहीं रहती। ख़ूबी तो यह है कि अपने ज़ेहन में उठने वाले प्रश्नों से कवि स्वयं तो बेचैन रहता ही है, पाठक को भी चैन से नहीं बैठने देता।

मुकेश निर्विकार की एक कविता है : 'सवाल पंच तत्त्वों से, जो मेरी देह पर दावा करते हैं। मसलन :

ऐ जल ! ज़रा बताओ तो सही -
कब आज़ाद हुए तुम
ठाकुर के कुएँ से ?
और कितने आज़ाद हो सके हो अभी ?
हे अग्नि !

तुम तो बेशक
काम आई हमारे
रोटियाँ आधी
और झोंपड़ियाँ पूरी जलाने में
अंततः देह सुलगाने के भी।

इस प्रकार सभी पंच - तत्त्वों से कवि सवाल करता है । जिनके उत्तर नहीं मिलते।

कहने का तात्पर्य यह है कि सिर्फ़ स्वप्न और उम्मीदों के सहारे हमारे वजूद क़ायम हैं। अभाव और इच्छाओं से बना है संसार और रोटी सबसे बड़ी मजबूरी है मानवता की ।

इस कवि की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि वह किसी भी सूरत में नाउम्मीद होना नहीं चाहता। यद्यपि उसकी गर्दन भी गिलोटिन पर टिकी है ।

काव्यभाषा, शिल्प और संवेदना के स्तर पर कवि मुकेश निर्विकार की कविताएँ किसी भी सूरत में उन्नीस नहीं हैं ।

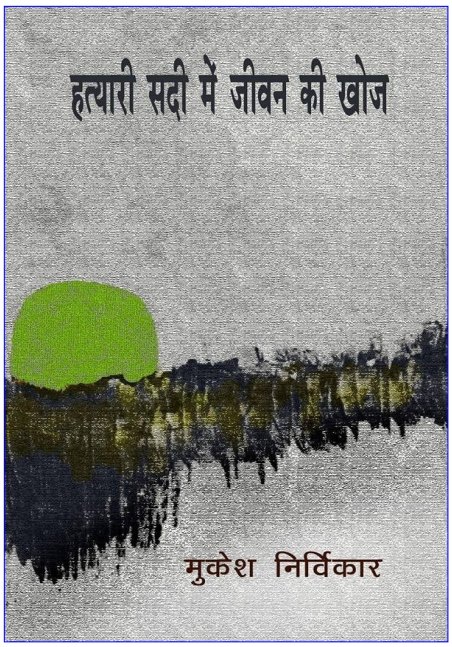

पुस्तक: हत्यारी सदी में जीवन की खोज
आईएसबीएन : 978-93-84569-46-4
प्रथम संस्करण : 2016
प्रकाशक : समन्वय प्रकाशन, कविनगर, गाजियाबाद-उ.प्र.

***

डॉ. नीलम गर्ग
हापुड – उत्तर प्रदेश मो. 9458050725

कवयित्री कुंतेश दहलान की कविताएं 'गुनगुनी चाय और स्त्री'

'गुनगुनी चाय और स्त्री' कुंतेश दहलान का प्रथम काव्य संग्रह है। इस काव्य संग्रह में 77 छंद मुक्त कविताएँ संग्रहीत हैं। यहाँ मैंने छंद मुक्त शब्द विशेष प्रयोजन से ही प्रयुक्त किया है। मुझे सुमित्रानंदन पंत की निम्न पंक्तियाँ अनायास ही स्मरण आ गई हैं- **"खुल गए छंद के बंध, प्रास के रजत पाश।"** दरअसल वर्तमान में मुक्त छंद की कविताओं की निर्झरिणी निर्बाध गति से प्रवाहित हो रही है। इन कविताओं में छंद के बंधन के स्थान पर भावों की एक लय होती है। मेरा मानना भी यही है कि कविता में शिल्प की अपेक्षा भाव एवं लय ही प्रमुख होते हैं जो पाठक को सीधे कविता से जोड़ते हैं। तभी तो कुन्तेश सहजता से लिख पाती हैं-

"भावों की पाती है कविता
दुख-सुख की साथी है कविता।"

प्रस्तुत संग्रह में जीवन के अलग- अलग रंग और भाव बोध हैं पर सबसे ज्यादा कविताएँ स्त्रियों पर लिखी गई हैं। ये सभी कविताएँ प्रभावित चाहे ना करती हों, लेकिन उनमें विद्यमान स्त्री अस्मिता की गहरी ठसक अच्छी लगती है। एक अजन्मी बेटी के सपनों की अभिव्यक्ति के साथ ही स्त्री जीवन के विविध रूपों को कवयित्री ने बहुत ही बारीकी से अपनी कविताओं में उकेरा है। बेटी, प्रेयसी, पत्नी, माँ, दोस्त (सखी) के मन की अनोखी सहज-सुंदर अभिव्यक्ति इन कविताओं में दृष्टिगोचर होती है, जो आकार में छोटी होते हुए भी अनुभूति में परिपक्व हैं। कुछ कविताएँ काफी अच्छी बन पड़ी हैं। कवयित्री का मानना है कि आज जड़वादी एवं रूढ़िवादी परंपरा की दीवारें धीरे-धीरे टूट रही हैं। स्त्रियों में स्वचेतना का विस्तार हो रहा है, अतः आज की स्त्री अपने दायित्वों की तरह ही अपने अधिकारों, अपनी सीमाओं को अच्छी तरह पहचानती है। कवयित्री स्त्री को अपना प्रतिद्वंद्वी समझने वाले पुरुष को 'सोच लो' कविता के माध्यम से सचेत करती हैं-

"देखो,
फिर समझा रही हूँ तुमको,
खुद को मुझ पर सिद्ध मत करो,
मुझे
अपने विरुद्ध मत करो।"

प्रस्तुत कविता में उन्होंने स्पष्ट कर दिया है कि यदि पुरुष विरोधी और प्रतिद्वंद्वी के स्थान पर स्त्री को अपना साथी समझेगा तभी हर कदम पर उसे अपने साथ पाएगा अन्यथा अपने अधिकार के लिए आज की स्त्री उसके सामने खड़ी होगी। इसी मिजाज की एक अन्य कविता में स्त्री को गढ़ने की कोशिश करने वाले पुरुष को सावधान करते हुए वे लिखती हैं कि

"कोशिश न कर मुझे गढ़ने की,
मुझे खुद ही खुद में ढ़लने दे,

.....

मत इम्तिहान ले मेरे
सब्र का तू बेवजह,
तू अपनी हद के साथ रह,
मुझे मेरी हद में रहने दे।"

घर, परिवार और समाज में महिलाओं के दोयम दर्जे से कवयित्री अत्यंत आहत हैं और उसके लिए उनके भीतर जो गुस्सा है वह सहज ही उनकी कविताओं में दिखाई देता है। महिलाओं और पुरुषों के लिए अलग-अलग सामाजिक मानदंडों पर त्योरी

चढ़ाते हुए वे लिखती हैं-

"यूँ तो नहीं चाहती मैं,
स्त्री और पुरुष को
एक ही धरातल पर तौलना,
लेकिन
कुछ प्रश्न, कुछ अनुभव,
कुछ एहसास
कर देते हैं मजबूर,
इस विषय पर बोलना।"

'घरेलू स्त्री', 'नींद से जागी घरेलू स्त्री', 'कुछ प्रश्न घरेलू स्त्री से', 'स्त्री: तू खुद आधा समाज है', 'खुद का विद्रोह जरूरी है', 'तुझ पर ही', जैसी कविताओं में कवयित्री स्त्री से सीधे प्रश्न करती हैं कि वह इन रूढ़ियों की कारा में कब तक कैद रहेगी। 'तुझ पर ही' कविता की निम्नलिखित पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं-

"तू ढलती चली गई,
रूढ़ियों और
अनुचित परंपराओं में
और सीख लिया,
चुप रहना,
सब कुछ सहना।"

प्रस्तुत शब्दों के माध्यम से कवयित्री सहजता से इंगित करती है कि चुप रह कर सब कुछ सहने से अपने अधिकार कभी प्राप्त नहीं होते। उसके लिए खुद का विद्रोह जरूरी है। समाधिकार की वह लौ तभी जल पाएगी, जब स्त्री अपने मन-मस्तिक को कुरीतियों की जकड़न से मुक्त कर अपनी स्वतंत्र उड़ान भरेगी। इन सभी कविताओं में पितृसत्ता को चुनौती देता स्त्री स्वर मुखर है। प्रस्तुत संग्रह की शीर्षक कविता 'गुनगुनी चाय और स्त्री' भी स्त्री व्यक्तित्व का विश्लेषण एक नए पर यथार्थ और सटीक ढंग से करती है।

स्त्रियों पर लिखी कविताओं के अतिरिक्त कवयित्री ने प्रस्तुत संग्रह में प्रेम के विविध बिम्बों को रूपायित किया है। प्रिय के वियोग में रात-दिन नज़र उसी को ढूँढती है। निम्नलिखित पंक्तियाँ इस पीड़ा को बहुत सूक्ष्मता से चित्रित करती हैं-

"होके बेचैन शामो सहर ढूँढती है,

आज भी तुमको मेरी नज़र ढूँढती है।"

प्रेम के भावों को उकेरना की दृष्टि से 'प्रियतम के घर जाती शाम', 'इस जहाँ में कोई मुझसा', 'मुझे उसने पुकारा होगा' जैसी कविताओं के नाम उल्लेखनीय हैं। संग्रह की कुछ कविताएँ कवयित्री के जिंदगी के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण को उजागर करती हैं तो कुछ अन्तर्मन की गठरी खोलते हुए तथाकथित अपनों के मुखौटे उतराती हैं और कुछ नई पीढ़ी को बुजुर्गों के आदर-सत्कार का पाठ सिखा देना चाहती हैं।

कुल मिलाकर कविता संग्रह पठनीय है। सरल भाषा शैली एवं भाव अच्छे होने के बावजूद कुछ कविताओं में विन्यास की अनगढ़ता अखरती है। कहीं-कहीं अभिव्यक्ति में दोहराव से एकरसता का आभास होता है। आशा करती हूँ कि सुधि पाठक इन कविताओं का भरपूर आनंद लेंगे और साहित्य जगत में इसको सराहना मिलेगी। कवयित्री कुंतेश दहलान को बहुत-बहुत बधाई और भविष्य की सृजनात्मक संभावनाओं के लिए मेरी हार्दिक शुभकामनाएँ।

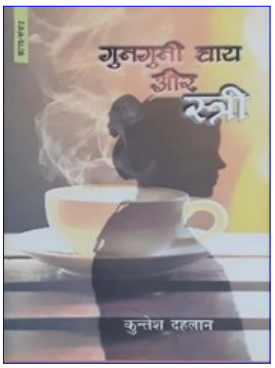

पुस्तक: गुनगुनी चाय और स्त्री
आईएसबीएन : 978-93-92200-16-9
प्रथम संस्करण : 2022
प्रकाशक : समन्वय प्रकाशन, कवि नगर, गाजियाबाद-उ.प्र.

***

(Volume-2, issue-1)

शुभोदय